किन्तु कानपुर में नंवरात्र व्रत सम्पन्न करने के कार्य-क्रम को मैंने यहाँ के रामलीला कमेटी (परेड) वालों को इसलिये स्वीकृति प्रदान कर दी कि श्री चरण का अपने नियमानुसार श्री रामनवमी के दिन अयोध्या पहुँचना न छूट पाये । अष्टमी को हजारी बाग (बिहार) से चलकर श्री रामनवमी के दिन अयोध्या पहुँचना बड़ा कठिन था । मार्ग में त्रिकाल पूजन और अन्य दैनिक चर्या पूज्यवर की जो ठहरी । इधर कानपुर के समीप ही खजुहा के भक्त गण २ वर्षों से पूज्यवर के प्रवचन को सुनने के लिये समय चाह ही रहे थे । अतएवं इन सभी दृष्टियों से कानपुर अधिक उपयुक्त समझा गया । नवरात्र व्रत आरंभ हो गया । परेड (कानपुर) स्थित रामलीला कमेटी के भवन में कमेटी वालों ने ठहरने की व्यवस्था की थी । कानपुर के जी० एन० के० कालेज में प्रति दिन रात्रि ६ से ८ तक भक्त लोग श्री मद्भागवत कथा का रस पान करने लगे । पंचमी के दिन सायं जी० एन० के० कालेज में प्रवचन के पूर्व कानपुर के ही ट्रान्सपोर्ट नगर में श्री चरणों का प्रवचन रखा गया था । उस दिन श्री चरणों से मैंने निवेदन किया कि त्रिकाल पूजन दिन में ही समाप्त कर लें ताकि जी० एन० के० कालेज से लौटने पर पुनः प्रतिदिन की भाँति पूजन पर न बैठना पड़े । आज आपको श्रम अधिक होगा । ऐसा ही हुआ श्री चरणों ने मेरी प्रार्थना स्वीकार कर ली और बड़ी पूजा रुद्राभिषेक मध्याह्न में ही कर लिया और लघु पूजन सायं ५ बजे तक करके भिक्षा ग्रहण करनी थी । अपराह्न ४॥ बजे से पूज्यवर ने पूजन आरंभ कर दिया । दरवाजा तो भीड़ से बचने के लिये बन्द रहता ही था । यह क्या ५॥ बज गये अभी तक श्री चरणों ने शंख ध्वनि नहीं किया, (पूजनोपरान्त शंख ध्वनि करते थे) दरवाजा खोलकर देखा तो मसनद के सहारे लेटे हुए श्री चरण श्री ठाकुर जी के पधराने का काष्ठ वाला वह वृत्ताकार पात्र कपड़े से पोंछ रहे हैं । उन्होंने मुझे देखते ही रुँधे गले से कहा 'आओ, आओ पुराना वायु का हमला हो गया है । मेरे सिर और गर्दन में पीड़ा है तुरन्त काशी ले चलो । मेरे सभी कार्य-क्रम रद्द करने की घोषणा कर दो ।' तत्काल मैंने ड्राइवर से सारा सामान लादने के लिये कहा और श्री चरणों के अनन्य भक्त कानपुर के प्रतिष्ठित नागरिक डॉ० संकटा प्रसाद पाण्डेय और वैद्य श्री कृष्ण सुन्दर वाजपेई को फोन पर सूचित किया । फिर तब तो समिति के पदाधिकारी भी आ गये और यह समाचार विद्युत की तरह पूरे शहर में फैल गया । ये दोनों महानुभाव १० मिनट के अन्दर पहुंच गये । इधर पूज्यवर को अब १ मिनट कानपुर में रुकना असह्य हो रहा था । कार तक श्री चरण स्वयं चल कर आये और विराजमान हो गये । उनका आदेश मुझे पिछली सीट पर बैठने को हुआ तुरन्त अपनी गोद में लेकर पूज्यवर को वीरासन के साथ बैठ गया । श्री चरणों की आज्ञा हुई कि रास्ते भर हरे राम हरे राम कहते चलो । रास्ते भर यही मंत्र का जप उच्च स्वर से करते रात्रि १ बजे काशी आ गया ।

प्रातः ५ के लगभग श्री चरणों ने अचानक अपने नेत्रों को बन्द कर लिया । और प्रायः २१ दिन तक वे समाधि के अति उच्च स्तर में अधिरुढ़ होकर 'अहं ब्रह्मास्मि' ज्ञान में स्थित रहकर निर्विकल्प, निराकार, विभु और बन्धन मुक्ति रहित चिदानन्द मय शिव स्वरूपता का अनुभव करने लगे । पूज्य श्री चरणों के अस्वस्थता का समाचार विद्युत की तरह पूरे देश-विदेश में फैल गया और भक्त लोगों के आने का क्रम जारी हो गया । ज्योतिर्मठ के शंकराचार्य, पुरी के शंकराचार्य सहित

पूज्यवर के सन्यासी ब्रह्मचारी शिष्य भी पहुँचने लगे। चिकित्सा वैद्यराज पं० श्री बृज मोहन जी दीक्षित एवं उनके सुपुत्र डॉ० श्री शशिकान्त दीक्षित जी करने में लग गये। औषध एवं पथ्य मैं ही दे रहा था। प्रायः २१ दिन बाद पूज्यवर ने भक्तों के ऊपर कृपा कर अपने नेत्रों को खोला और कहा कि हमें भगवान की चर्चा सुनाओ उसी से हम ठीक होंगे। बिना कथा के हमें सब कुछ सार हीन लगता है। धीरे-धीरे श्री चरणों ने लोक व्यवहार का त्याग करना आरंभ कर दिया और पूर्णरूपेण अन्तर्मुख होते गये। व्यवहार और प्रपंच की बात आने पर लोगों से कहते कीर्तन करो, रामायण सुनाओ, विष्णु सहस्त्रनाम सुनाओ, चंडीपाठ सुनाओ, राम रक्षा स्तोत्र सुनाओ, गीता सुनाओ, श्री मद्‌भागवत सुनाओ आदि-आदि। पूज्यवर अयोध्या के श्री लक्ष्मण किलाधीश जी का भजन बड़े आत्म विभोर भाव से सुनते थे। श्री प्रकाश जी मिश्र से प्रायः रात्रि में भगवान की कथा अवश्य सुनते थे। वृन्दावन धाम के स्वामी निश्चलानन्द जी और चिन्मयानन्द जी, स्वामी कृष्णानन्द जी आदि पूज्यवर के यति और ब्रह्मचारी शिष्य प्रतिदिन कथा सुनाया करते थे। हम भी 'श्री राम चरित मानस' 'देव्यापराध क्षमा स्तोत्रम' प्रायः मध्याह्न और रात्रि में सुनाते रहते। जितने भी निकट के लोग आते सभी से भगवन्नाम कीर्तन करने को कहते। इस बीच कथा सुनते-सुनते रोने भी लगते थे। श्री चरण जब स्वस्थ भी थे तो भी कथा सुनते-सुनते या भगवद्‌भक्ति परक भजन सुनते रो पड़ते थे। कानपुर के ही जी० एन० के० कालेज की घटना है। आज से ४-५ वर्ष पूर्व सूरपंच शती समारोह का आयोजन किया गया था। पूज्य श्री चरणों का भी प्रवचन रात्रि में होता था। भारत के मूर्धन्य साहित्यकार पधारे हुये थे। एक दिन रात्रि में आकाशवाणी के एक कलाकार ने सूरदास जी का वह भजन सुनाया "निशि दिन बरसत नैन हमारे" "मधुबन तुम कत रहत हरे" को सुनकर पूज्यवर के नेत्रों से खूब अश्रुपात हुआ। पूज्य श्री चरणों को देखकर तब तो सारा उपस्थित जन समूह ही अश्रुपात करने लगा जो प्रत्यक्ष दर्शी हैं उनको ज्ञात ही होगा। पूज्यवर का अगाध विद्वता के साथ-साथ भक्त का रूप देदीप्यान था।

श्री चरणों के हृदय में करुणा की अजस्र धारा प्रवाहित होती रहती थी। वे दया के महा समुद्र थे। पूज्यवर में सभी गुण होड़ बाँधकर एक साथ दिखाई देते हैं। मई या जून १९८१ के किसी दिन की घटना है। हरिद्वार से वीतराग पूज्य स्वामी भूमानन्द तीर्थ जी पधारे महाराज श्री के पास बैठकर कुछ वार्ता कर रहे थे। मैं भी इधर-उधर की व्यवस्था देखने में व्यस्त था। उन दिनों मैं विषम परिस्थितियों से घिरा हुआ था। पूज्य श्री चरण अन्तर्यामी थे ही, उन्होंने सहसा बुलाकर मुझसे कहा "चिन्तामत करो। हमारी प्रसन्नता ही तुमको इष्ट है न ! तो मैं तुमसे अतीव प्रसन्न हूं और सदैव प्रसन्न रहूंगा।" श्री चरणों की वाणी सुनते ही मेरे नेत्रों से अश्रुपात होने लगे। आखिर मेरे आशुतोष प्रसन्न हो ही गये। अब मेरे लिये प्राप्तव्य ही क्या शेष रहा ? सब कुछ पा गया। पूज्य स्वामी भूमानन्द जी महाराज ने मुस्कराते हुये कहा कि आज तो तुम बाजी मार ले गये। पूज्य श्री चरणों की प्रसन्नता और उनका शुभाशीर्वाद ही तो आज मेरे जीवन का पाथेय है।

वेद शास्त्रादिमर्मज्ञान् अनन्त श्रीविभूषितान् ।
तपस्विप्रवरान् नौमि श्रीमतः करपात्रिणः ॥
शास्त्रार्थवादी भगणेषु सिंहान्
समस्त विद्वत्प्रणताङ्घ्रिपद्मान्
धर्मावतारान् यतिवर्यमुख्यान्
नमामि पूज्यान् करपात्रपादान् ॥
एषां हि वेदागमपारगाणाम्
सान्निध्यमाप्तो यदि नास्तिकोऽपि
आस्तिक्यबुद्ध्या श्रुतिमूलधर्मम्
संसेवितुं नित्यमिहेहते सः ॥
बिल्व दलम्
—शुल्कोपाह्व श्री गणेशस्य

# अद्भुत देवता

निखिल श्रुति स्मृति पुराणोपनिषदामे कत्र प्रगाढ़ स्वाध्याय पूर्वकम् व्यापक सनातन धर्म मर्यादा पालनायाध्यात्मिकाधिराजनैतिकाधिसामाजिक तर्क वितर्क दुस्तर्क संयुक्त सनातन धर्म पताका दिग्दिगन्तरेषु प्रसारितायै मनोवाक्काय कर्मभिर्सैद्धान्तिकानेक ग्रन्थोल्लेखैश्च समीचीनं प्रशस्त समाधान पूर्वकम् कृतदृढ़ संकल्पाः धर्म मूल गोद्विजधेनु सुरसताम् कल्याणाय, श्रुति स्मृति प्रतिपादित समानज्ञान कर्मोपासना युक्त शैव वैष्णव शाक्ताद्यभेद समन्वित साङ्गोपाङ्ग समन्वय युक्त स्वजीवने सम्यक्तात्वेन पालन पुरस्सरोपदेशकाः, परम दुस्साध्य ज्योतिष्मती सफलीकृत कल्पेनानुप्राणितमायुर्वेदाय धृतव्रताः, तथा चः—

परदार परद्रव्य परद्रोह पराङ् मुखः ।
गंगा ब्रूते कदागत्यमामयं पावयिष्यति ।।

प्रत्यक्ष प्रमाण रूपमस्य श्लोकस्य, सनातन धर्म धुरीणाः परमवीतरागाः पूर्णज्ञान यश तपोधनाः अनन्त श्री विभूषिताः स्वनामधन्याः पूज्यपादाः श्री गुरुदेव स्वामिकरपात्रिचरणाः विजयतेतराम् । यतोतिः—

वदनं प्रसाद सदनं, सदयं हृदयं, सुधा मुचो वाचः ।
करणं परोपकरणं येषाम्, केषाप् न ते वन्द्याः ।।

श्रीमताङ्किंकरः
श्यामनारायणः

भास्वद् गैरिक चीर्ण चारयुगलप्रोद्भासिगौरच्छविः
भस्मोद्दीप्तविशालभालपटलोरुद्राक्षमालाञ्चितः ।
धामोद्गारिविभाविभासितशरच्चन्द्राभदिव्याननो
भाति श्री 'करपात्र' इत्युपपदप्रख्योऽपरःशंकरः ।।

# षट्पद गुञ्जनम्

देवज्ञ जगदीश प्रसाद शर्मणः।

**कण्ठे यस्य नमः शिवाय ललिताधिष्ठान मन्त्रामृतम्।**
**श्री कामेश्वर पादपद्म युगलं श्रीमत्सहस्राम्बुजे ॥**
**माद्यन्ती विसतान्तवी च दहराकाशे प्रकाशेन्दिरा।**
**तं शान्तं करपात्र शम्भुवपुषं भक्त्या नमस्कुर्महे ॥१॥**

जिनके कण्ठ में 'ॐ नमः शिवाय' यह ललिताधिष्ठित मन्त्रामृत निरन्तर आवर्तित होता है, प्रफुल्ल सहस्रदल कमल पर श्री कामेश्वर जी के युगल चरण कमल विराजमान हैं तथा हृदयस्थली के दहर-आकाश में विसतन्तु के समान सूक्ष्म प्रकाश लक्ष्मी विहार करती है उन शान्त चित्त शिवकल्प, महाराज श्री करपात्र स्वामी जी को हम लोग भक्ति पूर्वक प्रणाम करते हैं।

**प्रज्ञानं रमयन् मुदा शुकगवो सौन्दर्य मुन्मीलयन्।**
**दाक्षिण्यं कलयन्नघं विकलयन् शुभ्रं यशो वर्धयन् ॥**
**भक्तान् संस्नपयन् वचोजलभरैः श्रीकृष्ण गोपाङ्गना।**
**माधुर्यातिशयाधरीकृत सुधैः श्रीमान् गुरू राजते ॥२॥**

ज्ञान को आनन्दित करने वाले श्री शुकदेव जी महाराज की वाणी श्रीमद् भागवत के गूढ़ार्थ-सौन्दर्य के प्रकाशक, कोमल-हृदय कलुष दूर करने वाले, श्रीकृष्ण गोपाङ्गनाओं की रासलीला के मधुर-अमृत से भक्तों को आप्यायित करने वाले श्रीसम्पन्न गुरुवर श्री महाराज करपात्री जी सर्वोत्कृष्ट हैं।

**सानन्दं वचनाचलाञ्चलगलद्वेदान्तमन्दाकिनी—**
**वीचिव्रात निपातितान्धतमसप्रोच्छून शङ्कातटः ॥**
**निर्ग्रन्थोऽपि यजन् मयूख सरणि! सौमीं सदा शाम्भवीम्।**
**हस्तौ पात्रमिवोद्वहन् विजयतां वेदार्थ कल्पद्रुमः ॥ ३ ॥**

आनन्दपूर्वक, वचन पर्वत से निकलने वाली वेदान्त गङ्गा के तरङ्ग समूह से अनेक उद्दाम शंका तटों को ध्वस्त करने वाले निर्ग्रन्थ होते हुये भी साम्ब-शाम्भवी प्रकाश रश्मियों की आराधना करने वाले वेद के अर्थ के कल्प वृक्ष श्री महाराज करपात्री जी की जय हो।

**संसिक्ता वेद वर्षैरमृत मधुझरैः सांकुरा ब्राह्मणैर्या।**
**वेदाङ्गैः पत्रसङ्गा हृत कलुष कथैः पुष्पिता षट् पथैश्च ॥**
**आनन्दोद्यन्मरन्दा सुरभित भुवना सेविता साधुभृङ्गैः—**
**जीयात्सा कारपात्री सुमति कमलिनी पद्म वर्षं सहर्षम् ॥ ४ ॥**

जो सौंची गयी शतपथ आदि ब्राह्मण ग्रंथों से अंकुरिता, शिक्षाकल्प आदि वेद-मन्त्रों की वर्षा से सींची गयी शतपथ आदि ब्राह्मण ग्रंथों से अंकुरिता, शिक्षाकल्प आदि

वेद के ६ अंगों से पल्लविता, न्याय सांख्यादि षड्दर्शनों से पुष्पिता, आनन्दरूपी मकरन्द की संवाहिका, समस्त भुवन को सुगन्धित करने वाली श्री महाराज करपात्री जी की सुमति कमलिनी पद्म संख्या वर्षों तक विकसित रहे।

स्फीताः समस्त निगमागम सार गीता,
निष्यन्द नन्दित मनः करपात्र वाचः।
ज्ञानोर्मिला उपनिषद् गरिमाभिरामाः,
धन्याः स्वकर्ण पुलिनेष्ववतंसयन्ति ॥ ५ ॥

समस्त निगम-आगम के सार तत्व गीता के ज्ञान से पूर्ण उपनिषदों की गरिमा से अभिराम श्री महाराज करपात्री जी की वाणी से अपने कर्ण पुलिनों को सुशोभित करने वाले धन्य हैं।

सौजन्यश्रीपताकं सुकृत परिचलच्चामरं सामदण्डम्।
सत्कीर्तिच्छत्रविम्वं सदसि शुचिहृदामात्मचैतन्यमन्त्रम् ॥
विध्वस्तारातिवर्गं हरिरसरसनानीकिनी शक्ति सारम्।
भूमानन्त स्वराज्यं निगम विहरणं धर्मसम्राजमीडे ॥ ६ ॥

जिनके सौजन्य की पताका फहराती है सदाचार ही जिनके चामर हैं शान्ति ही जिनका दण्ड है, सुयश ही जिनका छत्रबिम्ब है, आत्म-बोध ही जिनका मन्त्र है, श्री हरि कथा रसास्वादन ही जिनकी सेवा है, कामादि अरिवर्ग के विध्वंसक, निगम-उपवन में विहार करने वाले, भूमा के अनन्त-स्वराज के स्वामी धर्म सम्राट श्री करपात्री जी की हम लोग स्तुति करते हैं। ●●

'दुनिया में जितने जन्तु हैं वे सब भगवान के ही अंश हैं। 'सियाराममय सब जग जानो।' इस भावना के विना काम नहीं चलेगा। इसका अर्थ यही है कि तुम दूसरों से न्याय का व्यवहार करो। धर्मसंघ इसी पर जोर देता है। लोकमान्य तिलक जी भी कहते हैं कि 'शास्त्र को न मानो तो भी अहिंसा को मानना पड़ेगा। सारांश ! हम किसी को भी न सतावें और दूसरा हमें न सतावे। यह अन्तर्राष्ट्रीय नियम बनना चाहिए कि एक दूसरे को न सतावें।

# करपात्राष्टकम्

डा०--शशिधर शर्मा, महामहोपाध्यायः, महाकविः, राष्ट्रपति पुरस्कृत
सप्त विषयाचार्यः, वाचस्पतिः, एम० ए० (संस्कृत हिन्दी)
डी. लिट्, पञ्जाब विश्वविद्यालय चण्डीगढ़

( १ )

**केचिद् भजन्ति विबुधा हरिमीशितारञ्चाऽन्ये हरं भवनिदाघहरं श्रयन्ति।**
**धर्माऽऽर्तिखिन्नमनसां समुपासनीयं प्रत्यक्षितं हरिहराऽद्वयमद्वयन्नः ॥**

कुछ बुद्धिमान् जन भगवान् हरि (विष्णु) का भजन करते हैं, और कुछ दूसरे संसार ताप-हारी हर (शंकर) की सेवा करते हैं। (किन्तु) धर्म की ग्लानि से खिन्न मन वाले हम लोगों की उपासना का पात्र तो हरि और हर का वह अनुपम अद्वैत है, जिसे हमने अपनी आँखों से देखा है।

( २ )

**सद्राजनीतिनिपुणः किमु विष्णुगुप्तो – वाचस्पतिर्निखिलशास्त्र विचक्षणो वा।**
**आहो शुको नु भगवद्गुणगान धन्यो यस्मिन्नितीव समशायि यतिः स वन्द्यः ॥**

"क्या यह उदात्त—लोककल्याणकारिणी – राजनीति में प्रवीण विष्णुगुप्त—आचार्य चाणक्य—हैं, या समस्त शास्त्रों में दक्ष देवगुरु बृहस्पति (किम्वा सर्वतन्त्रस्वतन्त्र वाचस्पति मिश्र) हैं या फिर श्री प्रभु का गुणगान करने से धन्य हुये शुकदेव ही हैं ?", जिनके सम्बन्ध में लोग इस प्रकार से (विविध) सन्देह किया करते थे—वे स्वामी – करपात्री जी वन्दना के पात्र हैं।

( ३ )

**यस्याऽवसन्नवरसा रसने सरस्वत्याभान्ति लेखतनवोऽतनुकीर्ति लेखाः।**
**चेतस्यभूत्सरसिजोदरसौकुमार्यं स्मार्यो न कस्य स वशीं शयभाजनाऽर्यः ॥**

जिनकी जिह्वा पर नव-रसमयी सरस्वती निवास करती थीं, लेखों के रूप में जिनकी महान् यशोराशिकी लेखाएं आज भी शोभा पर हैं, (और) जिनके हृदय में कमल के मध्य-भाग सरीखी मृदुलता थी, वे स्वामी करपात्री जी किसके स्मरणीय नहीं हैं ?

( ४ )

**वन्द्यः स योऽकृत कृती सुकृतार्थं संस्थाः रामायणे श्रुतिषु चाऽतत वाक्प्रवाहान्।**
**नैष्कर्म्यं मूर्ध्व मधिताऽधिधरं तथाऽपि कर्मेतराऽकृततरं व्यधिताऽप्रयाणम् ॥**

वन्दनीय हैं वे स्वामी करपात्री जी महाराज जिन मनीषी ने अनेकानेक धर्म संस्थाओं की

स्थापना की, जिन्होंने रामायण पर एवं वेदों पर सारस्वत धाराएं प्रवाहित कीं, जिन्होंने भू मण्डल पर नैष्कर्म्य अर्थात् ज्ञानमार्ग की सर्वोच्च सिद्धान्त रूप में प्रतिष्ठापना की, किन्तु जो प्रयाण काल तक दूसरों द्वारा सुतरां न किये गये कर्म का सम्पादन करते रहे।

( ५ )

**यः सत्कवि र्गुरुगुरुः बुध मङ्गलात्मा तीव्रप्रतापतपनश्च सतां च सोमः।**
**धर्मद्विषां शनि रथोन्मदिनाञ्च राहुः केतुः श्रुतेर्जयति दण्डिवरः स कोऽपि॥**

जो अनवद्य विद्यावान् (शुक्र) थे, जो गुरुओं के भी गुरु (बृहस्पति) थे, जो मनीषियों के कल्याणरूप (तथा बुध, मङ्गलमय) थे, प्रचण्ड प्रताप में जो सूर्य थे और सज्जनों के लिए चन्द्रमा थे, धर्म द्वेषियों के लिये जो शनि थे, अहङ्कारियों के लिये राहु और वेद की पताका (केतु) थे, वे विलक्षण यतिराज स्वामी करपात्री जयशील हैं।

( ६ )

**कारागमैः शिरसि दण्ड निपातघातैरप्येजनं न जनितं किल यस्य जातु।**
**दीपः सनातनसृते रपि गोष्पतेश्च वार्येतरोहृदि विभाति स नः सदाऽयं॥**

जेल यात्राओं से, यहाँ तक कि सिर पर लाठी पड़ने से लगी चोटों से भी जो अपने मार्ग से विचलित नहीं हुये, जो सनातन धर्म मार्ग के दीपक थे, और जिनको जीतना देवगुरु बृहस्पति के लिये भी कठिन था वे स्वामी (करपात्री) जी महाराज हमारे हृदय में सदा विराजमान हैं।

( ७ )

**तिष्ठेत् प्रणष्टकुहकः सुपथे नरौघः पारेऽम्बुधेर्जनगिरा प्रसरं प्रयातु।**
**गावश्चरन्तु परितोऽस्तभया घटोध्न्यः स्वप्नस्तवेति यतिराट्! फलिता कदा नु॥**

"लोग छल-पाप छोड़कर सन्मार्ग पर आरूढ़ रहें, हिन्दी का प्रसार समुद्र पार विदेशों में भी हो, घड़ों के सदृश थनों वाली गाएं (हत्याओं के) भय से मुक्त होकर चारों ओर विचरण करें"— यतिराज आपका यह सपना कब फलीभूत होगा?

( ८ )

**स दण्डिवर्योऽतियतीन्द्रचर्यः श्रौताऽध्वनो भूतल एकधुर्यः।**
**श्रेयोभृतां शश्वदपीह चार्यः धार्योहृदब्जे करपात्र आर्यः॥**

जो दण्डिसन्यासियों में शिरोमणि थे, बड़े-बड़े यतिराज भी जिनकी जीवनचर्या की तुलना नहीं कर सकते, जो देश-विदेश में श्रुति मार्ग के एकमात्र रक्षक थे और जो यहाँ कल्याण प्राप्त सुजनों के स्वामी थे, —वे श्लाघ्य करपात्री जी महाराज हमारे हृदय (सिंहासन) में धारणीय हैं।

●●

# भावाञ्जलिः !

**टिप्पणीः—**[श्रीमत्करपात्र स्वामि महाभागानां प्रथमं ब्रह्मचारिरूपेण एवं छात्ररूपेण अनुभ्रमतां शिष्य कोटि प्रविष्टानां मार्कण्डेय स्वरूपाणां ब्रह्मचारिवराणां विद्वद्वराणां तपस्विनां श्री मार्कण्डेय ब्रह्मचारिणां वाराणसीवासिनामियं भावाञ्जलिः उपह्रियते प्रथम पृष्ठे;

कथङ्कारं स यतिवरः लौकिकाभिजन इव सगुणोपासने प्रवृत्तः? कथं च सः विष्णु रुद्रगणेशादि पूजनं पूर्वकं श्रीमद्राजराजेश्वरी पूजनादौ प्रवृतः—इत्युत्तर यति द्वितीय पृष्ठे—

श्रीमत्करपात्र महाभागामामिष्ट देवता का? इति प्रश्नं समादधन् "सदा प्रसन्न राम" एव तस्येष्टदेवता इत्युत्तर रानि तृतीय पृष्ठे—

सोहि रघुनन्दन—प्रसन्नतां यान गताभिषेकत—<br>
स्तथा न मम्ले बनवास दुःखतः॥

सम्पादकः ]<br>
वाराणसीतः ब्रह्मचारिणो मार्कण्डेयस्य

'प्रसारवत्योऽखिलदर्शनेषु श्रुतौ स्मृतौ तत्त्वनयेऽद्वितीयाः।<br>
वाचंयमा नास्तिकवृन्दभूम्नाममोघवेगाः प्रतिभा विशीर्णाः॥ १॥

उत्साहसम्पत्तिमताममीषां यद्वैदिकानां बलमेकमासीत्।<br>
पदे पदे स्फूर्जदुदग्ररूपं तद् व्योममार्गे निखिलं विलीनम्॥ २॥

धृतिः समग्रा नियमः समृद्धः काष्ठापरासत्य सहिष्णुतायाः।<br>
सन्यासधर्मः किल देहधारी सर्वोगुणः सन्तमसे निमग्नः॥ ३॥

श्रीमद्गुरूणामविनश्वराणां विद्यातपोयोग समाधि भाजाम्।<br>
विनश्वरं केवलमेकमेव गौरं लघीयश्च शरीरमासीत्॥ ४॥

तद् व्यतीतेषु च विक्रमार्कान्माघे सहस्रद्वयवत्सरेषु।<br>
त्रिंशत्सु चाष्टासु समासु शुक्ले चतुर्दशी पुण्यरवौ प्रभाते॥ ५॥

भावाभिधाने शिशिरर्त्तुके च संवत्सरे नित्यविधिं विधाय।<br>
भागीरथी सङ्गतमव्ययं गतं विपश्चिद् धृदयैः सहैव॥ ६॥

चतुः षष्ट्युत्तरैकोनविंशतौ शतके गते ।
नभः शुक्ल द्वितीयायां फल्गुन्यां रविवासरे ॥ ७ ॥

सुपुण्ये भटनी ग्रामे प्रतापगढ़ मण्डले ।
द्विजवर्याग्रामनिधेर्यत्ते तेजः समवातरत् ॥ ८ ॥

यावज्जीवं प्रकुर्वाणो वेदवैदिक मङ्गलम् ।
शान्तमासीद् भृशं शुद्धं पञ्चसप्ते च वत्सरे ॥ ९ ॥

## कथं सगुणोपासना ?

श्रीमद्गुरूणां यदुपासनायां प्रवृत्तिरेषा च कुतः प्रसूता ।
एवं जनानां बहुधा विपृच्छा जागर्ति तत्रापि कियद् ब्रवीमि ॥ १ ॥

पश्चाति यात्रावसरे कदाचित् सन्ध्यायतां वैभगवत्पदाब्जम् ।
मनस्यभूदङ्कुर एष लोके बाह्यापि पूजा परिचालनीया ॥ २ ॥

सङ्कल्पनानन्तरमेव शालग्रामस्य काचित्-प्रतिमातिलघ्वी ।
समर्पिता विप्रवरेण केन श्रद्धातिरेकाच्चिदलङ्कृतेन ॥ ३ ॥

जलेन सम्पूज्य च वस्त्रखण्डे संवेष्ट्य संबद्ध्य च दण्ड मध्ये ।
मुदाभ्रमन्तो गुरवः प्रसन्ना ह्यकार्षुरुग्रां किल पादयात्राम् ॥ ४ ॥

जले समस्ताहि वसन्ति लोका सर्वस्य भूतस्य च जीवनं तत् ।
जलेन पूजा च समस्त पूजा संन्यासिनामुत्तरितं तदानीम् ॥ ५ ॥

ततः परं यज्ञ युगे प्रवृत्ते वाराणसी यज्ञ समाप्ति काले ।
नौकां समारुह्य पुनः प्रवृत्ता यात्रा गुरुणामभि पश्चिमायाम् ॥ ६ ॥

समाविशन् मां त्रिपुरारहस्य संश्रावणायाथ च साम्नगानाम् ।
प्रष्ठान् त्रिपाठि प्रवरांश्च दुर्गादत्ताभिधान् स्फाटिकयन्त्र सिद्धयं ॥ ७ ॥
निर्माप्य तच्छिल्पिवरप्रसादात्सम्प्राप्य सम्प्रेषित चक्रराजम् ।
गङ्गातटे कर्णपुरे गताश्च सुवर्णमाच्छ्रीगुरवोऽलभन्त ॥ ८ ॥
ततः प्रभृत्येव च यन्त्र पूजा लिङ्गानि चैकादश सम्मितानि ।
बहूनि पात्राणि च राजतानि कार्तस्वरापादित सौष्ठवानि ॥ ९ ॥
हैरण्य पात्राणि च पद्ममेकं समागतं द्वादशविल्वपत्रैः ।
स्थाल्यः पुनस्तानि कटोरकाणि सिंहासनं श्रीजगदम्बिकायाः ॥ १० ॥
गल्वर्कयोगात् महितानि तानि सर्वाणि चामीकर निर्मितानि ।
अत्रान्तरे गान्धिमहोदयानां महात्मनामाशु मृतिर्बभूव ॥ ११ ॥
उद्दिश्य तत् शासनयन्त्रकृद्भिरस्पृष्ट दोषा अपि मानवौघाः ।
बलेन कारागृहमध्यमेव निपातितास्तत्तु विलोक्य सर्वम् ॥ १२ ॥
उत्थानमार्गं सहसा विचार्य संयोजिता धार्मिक राजनीतिः ।
प्राप्ते वयस्कैः स्वमताधिकारे निर्वाचने व्यापृतका बभूवुः ॥ १३ ॥
लीलां समावृत्य च लौकिकीस्वां श्रीविश्वनाथे सकलं समर्प्य ।
शिष्येषु सर्वं विनिवेश्यभारं स्वधामदिव्यं चरमंह्यवापुः ॥ १४ ॥

## का–इष्टदेवता ?

केनचित् श्रेष्ठिवर्येण पृष्टाः श्री गुरवः पुरा ।
भगवद्दर्शने स्वीये किञ्चित्सम्प्रतिपाद्यताम् ॥ १ ॥
ऊचिरे तद्ब्रवीम्यद्य जिज्ञासूनां महार्थकृत् ।
अखण्डं सच्चिदानन्दं वृत्तौ मम सदा स्थितम् ॥ २ ॥

सदाभवत् ।
श्री राघवेन्द्रे महाभागे भक्तिर्मम सदाभवत् ।
राजराजेश्वरी विद्या वृत्तिरूपतया स्थिता ॥ ३ ॥
श्री कृष्णबोधयमिनो जगद्गुरु पदे स्थिताः ।
यदा तदानीमाहुर्मां वचः किञ्चिदुपह्वरे ॥ ४ ॥
एतेषां विषये गुह्यं तदपि श्रूयतां ब्रुवे ।
स्वान्ते निर्वेदमासाद्य गता यात्रां पदातयः ॥ ५ ॥
विद्यालयं परित्यज्ये परिवार पराङ्मुखाः ।
श्रीमद्हरिहरक्षेत्रे कृष्णस्य किल दर्शनम् ॥ ६ ॥
तदा जातं मया श्रुत्वा मानसे कीलित दृढम् ।
श्रीमद्गुरूणां विषये भगवद्दर्शनावधि ॥ ७ ॥
कथङ्कारं नु पृच्छेयं नोदभूत्साहसं मम ।
किन्तु प्रसङ्गे कस्मिश्चित् गुरुपादैः स्वयं मुखात् ॥ ८ ॥
भणितं लक्षणं किञ्चित् ब्रह्मदर्शन गोचरम् ।
हृदये यस्य भगवान् सगुणो निर्गुणोऽपि वा ॥ ९ ॥
सकृद्विभात उदियात् तस्य चेतसि भासते ।
ग्रन्थग्रन्थिः सुदुर्भेद्यो जटिलोऽपि मनीषिभिः ॥ १० ॥
हस्तामलकवन्नात्र मनागपि विचारणा ।
एतादृशानां केषाञ्चिदतीतानां महात्मनाम् ॥ ११ ॥
साधूनां सद्गृहस्थानां विदुषां योगिनामपि ।
तथा च वर्तमानानां चक्षुः पथमुपेयुषाम् ॥ १२ ॥
नामधेयानि सँल्लिख्य स्व मन्तव्यमपि क्वचित् ।
गङ्गा शङ्कर मिश्रस्य सविधे स्थापितं ननु ॥ १३ ॥
ततः केनाप्यपहृतं न्यासरत्नं तदुत्तमम् ।
न जाने किमभूत्तस्य भगवानेववेत्ति तत् ॥ १४ ॥

## श्री करपात्र वर्शनाञ्जलि :

—श्री वासुदेव शास्त्रिणः वाराणसीतः

( १ )

भवतु सदा विजयो धर्माणाम्, भवतु विनाशश्चाधर्माणाम्
भवतु सुसद्भावः सर्वेषाम्, अयमुद्घोषः प्रभवति लोके — श्री करपात्रयतीन्द्र मुनीनाम्

( २ )

भवतु हि कल्याणं विश्वानाम्, प्रभवतु विजयो गो मातॄणाम्
भवतु निरोधो धेनु वधानाम्, अयमुद्घोषः गर्जति देशे — श्री करपात्रयतीन्द्र मुनीनाम्

( ३ )

भवतु न खण्डं भारत देशम्, भवतु विधानं शास्त्रादेशम्
भवतु रामराज्यस्यावेशम्, एष विचारः प्रभवति लोके — श्री करपात्रयतीन्द्र मुनीनाम्

( ४ )

भवतु धर्म सापेक्षा नीतिः जन वर्गेषु सदा सत्प्रीतिः
वर्णाश्रम परिपालन रीतिः वर्गद्वेषविरुद्धः पक्षः — श्री करपात्रयतीन्द्र मुनीनाम्

( ५ )

न सन्तु केषाञ्चित्केऽपि शोषकाः सर्वे हि सर्वेषां सन्तु पोषकाः
सर्वे हि सर्वेषाञ्चापि पूरकाः समन्वयः सर्वजनहिताय — श्री करपात्रयतीन्द्र मुनीनाम्

( ६ )

धर्म विरहितं पूंजीवादम्, तथैव साम्यञ्च समाजवादम्,
प्रभावितं सर्वं भूतवादम्, स्वत्वविनाश कारकं कथनम् — श्री करपात्रयतीन्द्र मुनीनाम्

( ७ )

भवतु लोकतन्त्रं सुपवित्रम् धर्म नियन्त्रित शासनतन्त्रम्
सर्व सुलभ निर्वाचन तन्त्रम्, दर्शनमिदं राज्य तन्त्रस्य — श्री करपात्रयतीन्द्र मुनीनाम्

( ८ )

पूंजीवाद शासने शक्तिः पूंजीपतौ भवतु धन शक्तिः
अन्य जनानां महा दुर्गतिः नीतिशास्त्र पण्डित व्याख्यानम् — श्री करपात्र यतीन्द्रमुनीनाम्

( ९ )

समाज वादे संघीकरणम्, सर्वार्थानां राष्ट्रीकरणम्
सर्वं जनानां धनपर्यहरणम्, राजशास्त्र कवि कोविद कथनम् — श्री करपात्र यतीन्द्र मुनीनाम्

( १० )

राम राज्य वादे प्रभुशक्तिः भवति जनानां हस्ते शक्तिः
सर्वजनेषु भवत्यनुशक्तिः रामराज्य नय सुखकर कथनम् — श्री करपात्र यतीन्द्रमुनीनाम्

( ११ )

पंजीपतिभिर्प्रचलित वादम् सर्व जडं साम्य समाजवादम
विनाशकारं निज स्वत्ववादम् राम राज्य परिषन्नय नेययम्। श्री करपात्रयतीन्द्र मुनीनाम्

( १२ )

सर्वस्वे संहृते च वित्ते, जनता नृत्यति शासन हस्ते
मूढा भवतिविशोचति चित्ते, रामराज्य परिषन्नय नेयम् श्री करपात्रयतीन्द्र मुनीनाम्

( १३ )

श्री राम जयराम सदैव गेयम्, धनस्य संतुलनं संविधेयम्
वित्तञ्च दीनाय सदा प्रदेयम्, अर्थासंतुलनं पापकृत् कथनम् श्री करपात्रदतीन्द्र मुनीनाम्

( १४ )

श्री राम नामामृतमेव पेयम्, श्री राम राज्याय मतं प्रदेयम्
हितं हि विश्वस्य सदैव ध्येयम्, अध्यात्मवादाश्रित राजधर्मः श्री करपात्रयतीन्द्र मुनीनाम्

( १५ )

मार्क्सस्य वादो न यथार्थवादः विकास वादोऽप्ययथार्थवादः
युक्तो तथा नैव समाजवादः रामस्यराज्यो हियथार्थवादः श्री करपात्रयतीन्द्र मुनीनाम्

( १६ )

उत्तर वंग विहार प्रदेशे, महाराष्ट्र सौराष्ट्र स्वदेशे
केन्द्र शासिते दिल्ली देशे, धेनु सुरक्षाहितसत्याग्रहः श्री करपात्रयतीन्द्रमुनीनाम्

( १७ )

दिल्ली कारागृह संगमनम्, गो भक्तानां लगुडैर्हननम्
धर्महीन शासन संकलम्, लोह शलाका घातित नयनम् श्री करपात्रयतीन्द्र मुनीनाम्

( १८ )

अखण्डतायाः मनतु सुरक्षा, हिन्दु कोड हिन्दी गो रक्षा
कृता सदा आन्दोलन दीक्षा, सुस्मर देश समर्पित देहम् श्री करपात्रयतीन्द्र मुनीनाम्

( १९ )

प्रभवति वेदानामुपहासम् निर्मित तथ्यहीनमितिहासम्
जाति राष्ट्र संस्कृति परिहासम् सत्साहित्यानां निर्माणम् श्री करपात्रयतीन्द्रमुनीनाम्

( २० )

धर्म विहीना प्रभवति नीतिः प्रसरति मार्क्सवाद जड रीतिः
नश्यति जनवर्गे सत्प्रीतिः रामराज्य दर्शन संकलनम् श्री करपात्रयतीन्द्रमुनीनाम्

## श्रीमद् यतिराज पुण्यस्मृतिः

अद्यैकस्य महात्मनो यतिवरस्यानन्दवार्धेरियं,
नंदन्ती महिमस्मृतौस्तुति कृते वाग्देवतोज्जृम्भते ।
तन्वन्ती रसवर्षणेन परमाश्चर्यं प्रमोदाञ्चनम्,
श्रीमच्चित्र चरित्र चर्चितगुणोद्गार प्रसङ्गेणया ॥ १ ॥

सुष्ठु श्रीमदनन्तपावनगुणैः स्वं पावयन्त्येवसा,
पूर्णत्वं न जगामयास्यति न च प्रेमाघ्यंबोधाम्बुधेः ।
जित्वासर्वमनात्मदुष्टि वितत्तं, दुर्वादिवाक्सङ्गरम्,
तल्पेसत्परमात्म वैभवमये पारेगिरांस्थेयुषः ॥ २ ॥

कल्पोऽपिक्षणतामुपेष्यदमृतोद्गार श्रवानन्दिनाम्,
रम्यार्थप्रसरप्रवीण सु वचः सौरभ्यसम्पज्ज्जुषः ।
पारं ब्रह्मगिरामपि प्रथयतो यस्य प्रबोधामृतैः,
त्रस्तानां भवतात् स वो यति वरस्त्राता कलेर्दु ग्रहात् ॥ ३ ॥

स्वातौ व्योम जलं विहङ्गम इवापेक्षंत विद्वज्जनः,
मिथ्यार्थ प्रथितेः पराङ्मुख इतः श्रुत्यर्थमर्घ्याहृतम् ।
पाशात् कुज्ञकृतात् कदर्थ कठिनात् क्लृप्तोऽमुनामुक्तये,
दद्यात् तत् परमार्थ बोधि सुफलंवे दार्थ कल्पद्रुमः ॥ ४ ॥

मध्ये संसदितर्क कर्कश कटु क्लिष्टापिदुर्वादिनाम्,
होतव्ये हुत भोजने पततियद् धारायथा सर्पिषः ।
दात्री संव महामुदामृजुधियां स्फीतारसैर्वैष्णवै—
रर्घ्याकाऽपि सरस्वती हरिहरानन्दाभिधापातु वः ॥ ५ ॥

लीढायेनतु वैष्णवी रससुधा सुस्थैर्जनैर्लेहिता,
लावण्यामृत सागरे भगवतोऽन्येषांधियो हारिताः ।
मृत्योनिर्भयतां गतेनर्विजिता देहादि पर्यन्तगात्,
तप्तस्याच्छरूचोहुताशगहने हेम्नः स्वसत्यग्रहैः ॥ ६ ॥

मन्ये मह्यमृताशमह्यमहसामागारमेकं महत्,
होमाग्नि सुहुतं सदन्न सुरसैः सद्धूम लेखाकरम् ।
दत्तेयः शुचिताडनैरमदतां मिथ्यामदोन्मादिनाम्,
धिक् तस्यापवदन्ति कोपकलनां येऽनर्घ्य शीलस्यतान् ॥ ७ ॥

पुष्णन्ति श्रियमद्भुतां सुवदनाम्भोजोद्गतान्यक्षरा —
व्यस्य श्रीयतिराज एव नपरस्ये ह्यांशियानिक्रमात् ।
स्मृत्याऽऽप्तानि जनस्य कर्णं विवरं प्रत्यर्थिनोऽप्येकदा,
तिर्यग्भावजुषोऽपि मानस पदे शुश्रूषुतां तन्वते ॥ ८ ॥
लक्ष्मीर्लक्षणमातनोति सुभगं सायद्गिराऽऽकारिता,
हस्तेहस्तभृताऽस्यपाद कमल द्वन्द्वानताऽऽनीयते ।
रक्षायै प्रयतेत धर्म सुहृदां दुर्हृज्जनोन्मादहृत्,
यः कुर्वीततयैव मोक्षणमितस्तस्मै परस्मै नमः ॥ ९ ॥
शिल्पी चित्रसदर्थं शब्द भवनं निर्मातिसत्ये नयः,
वाहेन्द्रः खगराजमप्यतिगतो गत्याधियस्तीव्रया ।
यत्यारामसदेकचित्सुखरसा स्वादैक भोगीश्वरः,
स्युस्तस्यैवहताः कुमन्त्रकरिणः शार्दूलविक्रीडितैः ॥ १० ॥

× × × ×

श्रुतधन जन बल मानादुन्मत्तानां दृगन्धताधूत्यै
प्रहिता कापि सवित्रापरमपवित्राशलाकिकालोके ॥ ११ ॥
किं वा हरिहरनाम्नी परमानन्दासरस्वती विरला
विचरति वो यति रूपासा भ्रमकूपादुदञ्चयत्वार्याम् ॥ १२ ॥
अतीन्द्रिय ज्ञाननिधानसुश्रुति-प्रमाणितात्मानुभवप्रमोदभूः ।
सुरम्य शब्दार्थ चमत्कृतीश्वरो-यतीश्वरः कस्य न नन्दते हृदि ॥ १३ ॥
मुनीन्द्र संसद्यति माय योगिनः सदेकगाभान्तिगिरोऽस्तभिद्भ्रमाः ।
तरङ्गवीच्यादि विशेष विभ्रमा-जलैक सत्या जलधेरि वच्छटाः ॥ १४ ॥
यज्ञैरयाजिषत देवगणाः सुविप्र-द्वारेणभिद्भ्रमगिरः कुविदामपास्ताः ।
धर्मस्त्वनायिमहतीं पदवीम धर्म—प्रख्यापकाः सुदमिताः कुटिलभ्रुवैव ॥ १५ ॥
येनेश्वरेण सुविदां यतितल्लजेन—सद्ब्रह्मणि स्थिरतया न विपद्यशोचि ।
कारागृहाणि हसतैव सुमण्डितानि, क्लेशातिशायन पदान्यपितं नमाम. ॥ १६ ॥
वृन्दावने भगवतो मधुसूदनस्य, लीला उदार गुण गौरवतो ऽतिमृष्टाः ।
गीता हरन्ति खलु वैष्णव मानसानि, यस्याननाम्बुजत एव रहस्य रक्ताः ॥ १७ ॥
यः श्रीहरेः प्रिय कथाः प्रगृणन् सुश्रृण्वन्, भावातिरेक गलदश्रुसुधारयार्द्रैः ।
आर्द्रीकरोति जनमानस देह यष्टीस्तं वैष्णवाग्र गणितं यति राजमीडे ॥ १८ ॥

यस्यस्मृतिर्भवतिमन्दिरमिन्दुमौले—विश्वेश्वरस्य नव निर्मितमेव काश्याम्।

भावे[1]कृतादपि जनङ्गम सम्प्रवेशाद्, यद्भाव वर्जित हठादति दूरदूरम् ॥ १९ ॥
तस्योत्तमस्य करपात्र यतीश्वरस्य, उत्कृष्टनाम गुणकीर्ति भृतोऽ गुणस्य।
पुण्यस्मृतौ निहित महंतु भाव पत्रम्, पूजां वसन्ततिलकेन यदेति कर्तुम् ॥ २० ॥
सजयति वरवीरः सत्यधर्माहवेषु, वहतिनिशित धारा यो विपक्षायुधानाम्।
नगणयतिपुनस्ता लोककल्याण हेतौः, तमुपनयति मे वाङ् मालिनी भावमालाम् ॥ २१ ॥
जयन्ति भगवज्जनप्रभुदपारवारां निधि–प्रवर्धन महोत्सव प्रवणपूर्ण चन्द्रांशवः।
शुकागम भिधानभृत्परमहंस सत्संहिता–निगूढ परमार्थदा यति महागुरोः सूक्तयः ॥ २२ ॥
अशेषापन्नाश प्रवण भगवद्भक्ति भरितः परं दुस्तर्कौघ प्रमथनपटुर्दुर्मत गिराम्।
महावीरो धीरोऽखिल कुबुध वाग्युद्ध विजयी, महायोगी भोगीश्वर विष हर श्रीविजयते ॥ २३ ॥
प्रदाता धैर्याणां सततमवधाता श्रुतिमते, विधाता युक्तीनां निज हृदि निधाता जनहितम्।
मुवाग् दुःखात् त्रात्री परम सुखदात्री यदुदिता, अनावृत्तेर्यात्री जयति करपात्री सयतिराट् ॥ २४ ॥

अनन्तश्री भूषाङ्कित विरुदमालाति महती,
प्रवीणा देवर्षे र्हरि यशसि वीणेव महती।
यतीन्द्राणां मूर्त्तिः सुफल तरुवाटी शिखरिणी,
यशः शेषाऽतीयात् कनकगिरि कोटीः शिखरिणी ॥ २५ ॥
जयति हरिहरानन्दोगङ्गायमुना सितासितौघाढ्यः।
नूनं सं तीर्थराजः, प्रथते प्रकटा सरस्वती यत्र ॥ २६ ॥
इतीयं यतिराजस्य पुण्यस्मरणरूपिणी ।
अर्हणा वाङ्मयी जीयाद् भव्याय शरदांशतम् ॥ २७ ॥
गोविप्रप्रसुर भूत्यर्थं,
विन्दन्ते यदुपागमम्
दद्यात् स भगवान् नित्यं
वासुदेवो मतिं शिवाम् ॥ २८ ॥

**रचयिता**— गोविन्द वासुदेव ब्रह्मचारी, बिहारघाट, गङ्गातट,
पो० राजघाट, जिला— बुलन्दशहर, (उ० प्र०)

[1] भावे — विनोबाभावे

# करपात्री वन्दनम्

लेखक—वेदाचार्य पं० अरुणकुमार शर्मा एम. ए. संस्कृत, आयुर्वेद रत्न
अध्यक्ष श्री राम धर्म संघ परिषद् खेजरोली [जयपुर]

धर्मः क्षात्रो भृशमनुसृतो येन रामावतारे,
गोरक्ष्याद्यस्तदनु च विशां गोपकृष्णावतारे।
ब्राह्मं धर्मं स हि दृढतपस्तीव्रमास्थातु कामः
आविर्भूतःस्वयमिव हरिः शांभवंब्रह्मरूपम् ॥ १ ॥

योगारूढ़ प्रणवधनुरारोपितान्तः शराग्रः
चित्सामर्थ्य स्थगित-निज-निश्वासबन्ध प्रकम्पः।
विध्यन्नात्मन्यसकृदभितो ह्यात्मनापि प्रसन्नः
स्वेच्छामात्र-प्रहृतषडरिः कोप्यसौ धर्मवीरः ॥ २ ॥

केचिद् विष्णोर्भुवनविदिताः केऽपि शम्भोस्तथान्ये
सूर्याग्नीन्द्र-प्रभृति-मरुतां सन्ति चांशावताराः।
कृष्णः साक्षान्नरतनुधरं निर्गुण ब्रह्ममात्रं
त्वं सर्वेषां गुरुगुणमयः कोऽपि पूर्णावतारः ॥ ३ ॥

ज्ञानाम्भोधि— प्रकटित - महातत्त्व — मुक्ताफलाशी
भक्ति-श्रद्धा-कमल विलसन्मानसान्तर्विहारी।
सारग्राही गगनसदृश-ब्रह्मसञ्चारशाली
गंगातीरे व्यहरदनिशं कोऽप्यसौ राजहंसः ॥४॥

नानापन्था भ्रमीभूते लोकेऽस्मिन् येन दीपितं
दिव्यमाध्यात्मिकं तेजो करपात्रं स्मरामि तम् ॥ ५ ॥

नास्तिकोऽपि महाभक्तो महासिद्धश्च पामरः।
भवेद् यत्स्पर्शलेशेन करपात्रं नमामि तम् ॥ ६ ॥

नरोऽपि याति देवत्वं मर्त्यलोकोऽपि नाकतां
यस्य सङ्कल्पमात्रेण करपात्रं नमामि तम् ॥ ७ ॥

वायसोऽपि भवेद् हंसो हीनोऽप्युजयतां गतः।
यदाशीर्वाद मात्रेण करपात्रं नमामि तम् ॥ ८ ॥

# करपात्र-गाथा

— वैद्य ताराचन्द्र गोयल शास्त्री, ब्रह्मपुरी, मेरठ।

हरेर्यतेश्चरित्राणि स्वनुभूतस्य महात्मनः। करपात्राभिधानस्य विश्ववन्द्यस्य वर्णये ॥
गिरा तुच्छा मतिर्म्लाना चरित्रं परमोज्ज्वलम्। सहासं साहसं कुर्वे, क्षमां याचे मनस्विनः ॥
मनो देशे महाभागे भारते सुरवंदिते। आर्य जाते मंहद्ह्रासं धर्म कर्म प्रवञ्चनात् ॥ १ ॥
राष्ट्रं गौराङ्ग सन्तप्तं म्लेक्षैश्चापि निपीडितम्। निरीक्ष्य शंकरो भूयो देहं धर्तुं मनो दधे ॥ २ ॥
भटनी नामके ग्रामे, प्रतापगढ़ मण्डले। दृष्ट्वा "रामनिधेः" पुण्यं, विशुद्ध धर्म धारिणः ॥ ३ ॥
वेद रस ग्रहेन्दुख्ये वत्सरे श्रावणे शुभे। द्वितीयायां सिते पक्षे रविवारे परो रविः ॥ ४ ॥
पुत्रत्वेन गतो लोके, हरनारायणः शिशुः। यज्ञ धर्मं तपः शक्त्या देश कष्ट विनाशकृत् ॥ ५ ॥
जन्मार्जितैः सुसंस्कारै, बुद्धिमन्तं विलक्षणम्। संस्कृतं पाठयामास पिता तं बालकोत्तमम् ॥ ६ ॥
शीघ्रमेव विरक्तो भूद् ज्ञान विज्ञान सम्पदा। विचिन्वन्सगुरुश्रेष्ठं विश्वेश्वराश्रमं ययौ ॥ ७ ॥
ततो मेधाविनाधीतं वेदादिषड्दर्शनम्। इतिहास पुराणेभ्यस्तद्ज्ञानं विमलीकृतम् ॥ ८ ॥
श्रीमद्भागवते रम्येऽनन्यं तस्य मनोरतम्। तत्कथा गुणगानेना, ख्यातो हरिहरः स्वयम् ॥ ९ ॥
अतुष्टोऽथ तपश्चर्यां घोरामास्थितमानसः। प्रययावुत्तराखण्डं सिद्ध पीठं हिमालयम् ॥ १० ॥
वर्षत्रयं तपस्तप्त्वा, श्रुश्रावान्तर् ध्वनिं सुधी। कुरुष्व लोककल्याणं वेद मार्ग प्रदर्शय ॥ ११ ॥
ततः स परमो हंसो द्विज पंचगृहान्नतः। करपात्रो गृहन् भिक्षां करपात्रीति संज्ञितः ॥ १२ ॥
विचरन्खाण्डवारण्ये वृकप्रस्थस्थिताश्रमे। कालिन्दीकूलके रम्ये, कृष्णबोधाश्रमं श्रितः ॥ १३ ॥
वेदान्तवाद गूढेनर्च्छिन्न द्वैत पटाञ्चलौ। ब्रह्मानन्द रसाम्भोधावेकात्मतां गतावुभौ ॥ १४ ॥
कृष्णबोध परामर्शा द्यति धर्मं मुपासितुम्। ज्योतिष्पीठाधिपाद् दण्डं ब्रह्मानंदाद्दधे सुधी ॥ १५ ॥
पद्भ्यां धर्म प्रचारार्थं विचचार पुरं पुरम्। धर्मोपदेशघोषेण बोधयन्भारतीप्रजाः ॥ १६ ॥
सर्व शास्त्रार्थ तत्वज्ञैः पण्डितैर्मण्डिताऽजिता। ज्ञान प्रकाश ना त्काशी, विश्वेश्वर प्रिया पुरी ॥ १७ ॥
तत्रस्थास्तस्यवैदुष्यं, वैराग्यं च तपः श्रियम्। विलोक्य शंकराचार्यं मेनिरेऽभिनवं मुदा ॥ १८ ॥
दशभ्यां विजयाख्यायां कृष्णबोधाङ्घ्रि सन्निधौ। अकरोद् धर्म संघस्य स्थापनां स महाद्युतिः ॥ १९ ॥
धर्मस्य जयो नाशोऽस्त्य धर्मस्य प्राणिषु सद्भावना। विश्वस्य च कल्याणं भूयाद् हर हर महादेव ॥ २० ॥
इत्येष भारते घोषो, ग्रामे ग्रामे श्रुतो जनैः। श्रद्धा विनम्र भक्तौघैः करपात्र पदाम्बुजे ॥ २१ ॥
एकोनद्विसहस्राब्दे विश्वयुद्धे ह्युपस्थिते। आर्तं भारतमालोक्य कर्तुं मिज्यां मनोदधे ॥ २१ ॥
इन्द्रप्रस्थे राजधान्यामभूतपूर्वमखोत्तमम्। युयोज विश्व शान्त्यर्थं, गौराङ्गे प्रभु शासके ॥ २३ ॥
कृष्णबोधं समाहूय प्रत्यक्षा मन्न पूर्णिकाम्। तेने वितान संतानं याञ्चा मुक्त धनादिभिः ॥ २४ ॥
पंडितानां सहस्त्रं तु यज्ञ कुण्ड शतो परि। वेद ध्वनिप्रघोषेण स्वाहोच्चारमदश्यत् ॥ २५ ॥
कुम्भमेलनमत्राभूत् कोटिकोटि जनाकुलम्। यमुना सेतुबन्धैश्चं ह्यापणैं विविधैर्युतम् ॥ २६ ॥
समाचार प्रचारेण श्रुत्वा द्भुतं क्रतूत्तमम्। विभिन्न राष्ट्रिया लोका औत्सुक्यात्सगाययुः ॥ २७ ॥
विविधा यज्ञ संशोभाश्चित्रिताश्चकिताननैः। वेदध्वनि भवानन्दाफुल्लानम्रशिरोधरैः ॥ २८ ॥

यत्र संपत्प्रभावाद्वै विश्वशांतिरुपागता । स्वातन्त्र्यं भारते वर्षे प्रदष्टं केन नो मुदा ॥ २९ ॥
एवं भूत गुण ग्रामः करपात्री धियाग्रणीः । राष्ट्रद्वंधी कृदुद्योगं गौराङ्गानाम लक्षयत् ॥ ३० ॥
लार्डमाउण्ट वाग्जाले प्रविष्टं राष्ट्र नायकम् । नहरु बोधयाञ्चक्रे, राष्ट्रं च दृढया गिरा ॥ ३१ ॥
निषिद्धोगोवधो भूयाद् भारतं चाप्य खण्डितम् । जन सद्भावना भूयाद् न क्वचित्कलहांकुरः ॥ ३२ ॥
कारागारोग्रसंक्लेशैः पीडिता राष्ट्र नायकाः । शुश्रुवुर्नो गिरं लोभास्त्यागमूर्तेस्तपस्विनः ॥ ३३ ॥
द्विधाभूद् भारती भूमिहृ दयं हिन्दुतुर्कयोः । धर्म प्राणैः स धर्मात्मा कारागारे निपातितः ॥ ३४ ॥
कारागार गृहं सद्यः पुण्यपाद पदार्पणात् । कृष्ण मन्दिरमेवासीत्तारस्वरप्रकीर्तनात् ॥ ३५ ॥
यति वाक्यावमानेन जिन्नादि पद वंदनात् । यवनार्याति संघर्षाच्छोणिता भूदियं तु भूः ॥ ३६ ॥
दृष्ट्वा द्वेषाग्नि संदीप्तं हिन्दुस्थान मथाकुलम् । पुरे पुरे क्रतुं चक्रे विश्वेश्वर प्रसादनम् ॥ ३७ ॥
धाराप्रवाह यज्ञाद्यैस्त्रेता दृश्यमदृश्यत् । हरेरर्चा गुणोद्गानाद्द्वापरच्छविरुद्गता ॥ ३८ ॥
ब्रह्मानन्दे गुरौ लीने ज्योतिष्पीठ च शून्य के । गुरोः प्राप्ताधिकारोपि नागृहील्लोककर्म कृत् ॥ ३९ ॥
कृष्णं बोधं स्वहृदयं तपो ज्योतिषु भास्करम् । तत्पदं समलंकर्तुं मेने युक्तं महात्मसु ॥ ४० ॥
मयराष्ट्रे स्थितं बुध्वा यादूगिरि शुभाश्रमे । शिष्यौ प्रस्थापयामासा नेतुं काशीं शिवोपमम् ॥ ४१ ॥
करपात्रस्य वृत्तान्तं श्रुत्वाह्वानं च सत्वरम् । प्रतस्थे ट्रेन मार्गेण शिष्याभ्यां स कृपाणर्वः ॥ ४२ ॥
पुनः पुनश्च पृष्टौ ता, वूचतुः सादरं रहः । आकर्ण्य मध्यमार्गात् स, सरहस्यं गत स्ततः ॥ ४३ ॥
नेच्छद् ब्राह्म पदं किञ्चिद् ममत्वा हन्त्व वर्जितः । कथं स शंकराचार्यो भवितुं कामयेत्कृती ॥ ४४ ॥
शिष्यौ समागतौ वीक्ष्य विना बोधेन कल्मषौ । बुबुधे हृद् गतं वृत्तं हरिवर्यः कृतागसौ ॥ ४५ ॥
युक्ति बुद्धि समाचारै र्बुद्ध्वा बोध पदास्पदम् । स्वयं कारेण सम्प्राप्तः कृष्णस्थं क्रतु मण्डपम् ॥ ४६ ॥
तत आनीय काशीं स, विद्वन्महात्म मण्डले । ज्योतिष्पीठपदे कृष्णं विधानैरभिषक्तवान् ॥ ४७ ॥
दृष्ट्वा कृष्ण मुखाम्भोजं सत्सृक् चन्दन चर्चितम् । अभिजातं विनेदुस्ते जयघोषेण शंकरम् ॥ ४८ ॥
ज्योतिषि शंकराचार्यं कृष्णबोधं विधाय सः । कृतकृत्यं स्वयं मन्ये, करपात्रः स कर्मठः ॥ ४९ ॥
राजनीतिं विना धर्मो ऽपूर्णो नारीं विना नरः । विचिन्त्य रामराज्याख्यां संस्थामस्थापयद्यतिः ॥ ५० ॥
नहरोराग्रहं दृष्ट्वा हिन्दुकोडबिलादिषु । धर्मरक्षा विधानार्थमा जुहाव प्रजा ऋषिः ॥ ५१ ॥
द्विसहस्राधिके क्रान्ते स त्रिविंशतिकेऽब्दके । धेनु रक्षां समुद्दिश्य ह्यान्दोलं कृतवान्पुनः ॥ ५२ ॥
सिक्खजैनास्तथा बौद्धा ये च हिन्दुपदाभिधाः । देशभक्ताश्च यवना आन्दोलं समचालयन् ॥ ५३ ॥
इतिहासेह्यभूतपूर्वं हिन्दु संघ प्रदर्शनम् । लोक संसत्पुरोवर्तीन्द्रप्रस्थे विनियोजितम् ॥ ५४ ॥
ग्रामाद् ग्रामान्नरोनार्यो भिन्न जाति समुद्भवाः । नदा नद्यो यथाम्भोधौ तथान्दोले समागताः ॥ ५५ ॥
इन्द्र प्रस्थे जनौघो नो स आसील्लवणाम्बुधिः । दूरदार्शनिकैर्यन्त्रै नादृश्यत कुतः क्वचित् ॥ ५६ ॥
कांग्रेसोच्चपदासीना मंत्रि मुख्याः पदाधिपाः । विलोक्यापुर्भयं तीव्रं कूट नीतिं समास्थिताः ॥ ५७ ॥
साम दामादि भेदेन, दण्डयोगेन ते पुनः । संघं विघट्टयामासु र्गोरक्षापरिषन्मिषात् ॥ ५८ ॥
नित्यं धर्म समारुढो धर्म सम्राड्जनेरितः । कल्याण कर्मसक्तोऽसौ नैष्कर्म्यं परमं गतः ॥ ५९ ॥
वेद वेदान्तशाखानामन्ताराष्ट्रिय मेलनम् । कृतवान्स विदां भक्तः शास्त्र सम्पद्हेतवे ॥ ६० ॥
कृष्ण बोधं पुरोधाय साक्षात्सारस्वतं सुतम् । एकोहिजयते लोकं, शास्त्रार्थं समराङ्गणे ॥ ६१ ॥

शास्त्रार्थेषु पांडित्यं तस्य किं वर्ण याम्यहम् । शास्त्रयुक्तिप्रमाणार्कं विपक्षिपक्ष खण्डनम् ॥ ६२ ॥
प्रमाणान्वेषणे नासीद् ग्रन्थामुपयोगिता । कृष्ण कंठात्स्वयं ग्रन्थः प्रमाणमुद्जहारह ॥ ६३ ॥
लोकोत्तर तपस्तेजो मूतिमद् हरि कृष्णको । चन्द्र सूर्या विवा भातो धर्म तत्व प्रकाशको ॥ ६४ ॥
नास्तिकधी विशुद्धयर्थं देशकालोपयोगिनम् । ससर्ज स्वच्छ साहित्यं विद्वद्गणमुदावहम् ॥ ६५ ॥
रामायण मीमांसा, विचार पीयूष भक्ति सुधादयः । ग्रंथा ग्रंथि भेदकाः पठनात्सविचारं नराणाम् ॥ ६६ ॥

धीस्वास्थ्यकरोग्रंथो रामराज्य मार्क्सवाद विवेचकः ।
वेदार्थपारिजातः पंडित कण्ठ मण्डनंश्रिया ॥ ६७ ॥
अन्येऽपिवहवो ग्रन्थाः पत्रिका दैनिकाः शुभाः ।
संचारिताः प्रचारार्थं हिन्दु धर्मस्य धीमता ॥ ६८ ॥
धर्म भीरुः सुनिर्भीको ह्यदण्डोनृषु दण्डयुक् ।
अपदस्थः पदासीनो धर्म सम्राड् सद्धृदि ॥ ६९ ॥
बद्धो वन्दी गृहे मुक्तः कृष्णाभो विमलद्युतिः ।
शिखा सूत्रादि रहितः शिखा सूत्रंक जीवनः ॥ ७० ॥
सर्वजातिपरो योगी ब्रह्मण्यो दीन वत्सलः ।
विरक्तो रक्त वासोऽङ्गो दण्डी दण्डतः परः ॥ ७१ ॥
ज्ञान ध्वस्तद्वयाध्यासो हरि हरांघ्रि वन्दकः ।
समः सर्वेषु भूतेषु म्लेक्ष वंश निकृन्तनः ॥ ७२ ॥
दासो भूसुर धेनूनां शास्ता दुष्पथगामिनाम् ।
लोक संग्रहकर्ताऽसा, वेकान्त कृत केतनः ॥ ७३ ॥
लोक कर्मणि संसक्तो लोक कर्मव्यपोहकः ।
गुणैर्युक्तो गुणातीतः सन्मानगो विमानगः ॥ ७४ ॥
पुरुषः परमो हंसो रसजिद् रसिको रसः ।
सर्व संकल्प सन्यासी सत्संकल्पपरायणः ॥ ७५ ॥
वृद्धो बालः सदायोगी वियोगी ब्रह्मवद् बुधः ।
विरोधिसर्व धर्माणामधिष्ठानं मतोऽद्वयः ॥ ७६ ॥
यति वर्यस्य वंद्यस्य, विश्वशान्ति प्रकाशिनः ।
यशोगाथां समुद्ग्रथ्य पद्यपद्मस्रगर्प्यते ॥ ७७ ॥
ईदृशेश्वर रूपाणां कारुण्याब्धिहृदां विदाम् ।
यशो गंगावगाहार्थं सरस्वती स्वयमेति वै ॥ ७८ ॥
भूयो भूयोऽभिवन्देहं हंसाम्भोज पदद्वयम् ।
यच्छ्रवः श्रुतिमात्रेण ह्यहोंहारि रसात्मदम् ॥ ७९ ॥
भजत हरि हरानन्दं विश्व कल्याणैक विग्रहम् ।
योगीशवृन्द वन्द्यं करपात्राभिधं सुनिष्ठया ॥ ८० ॥

## करपात्र-स्वामि महाभागाः

स्वर्गीय—पं० विवाकर शास्त्री, मण्डी धनौरा, मुरादाबाद।

श्रीरामचन्द्रं नत्वा वै पृच्छयन्ते प्रश्नाः मया
करोति लोके धर्मस्य प्रचारः कोऽधुना वद
रतः कोऽत्र सुरक्षायां गवां ह्यद्य निरन्तरम्
पाति मन्दिर मर्यादां कश्चैकः बलवान् भुवि,
त्रीन् लोकान् हि जेतुं कः समर्थः यशसा सदा
जीवयत्यद्य को यज्ञान् कश्च वर्णाश्रमास्तथा
स्वादं सौख्यं च केनात्र त्यक्तं धर्मं प्रवृद्धये
मीयते बुद्धि वैशद्यमुत्तरं स्पष्टमेव हि।

## करपात्र पदाम्भोज-भ्रमरः

श्री रघुनाथ शर्मा सेमरी-छाता-बलिया (उ० प्र०)

करपात्र पदाम्भोज मकरन्द मदालसः।
रघुनाथो गुणान् वक्तुं तेषां कांश्चित्समुद्यतः ॥१॥
विश्वं ये ब्रह्म बुद्धया विदन्तो गोसेवां ये देशवृत्तिं वदन्तः।
ये नर्मदा देशपोषं गिरन्तो वृत्तिं सदा राम राज्येदिशन्तः ॥२॥
सदाऽभयं ब्रह्म बुद्धया स्मरन्तः सदा ऽभयं रामराज्ये वदन्तः।
सदाधर्मं शाश्वतं वेदयन्तो गताः सत्यं तं यतीन्द्रं नतो ऽहम् ॥३॥
यस्याचारो न्यासिनां दिष्टवर्त्मा यद्व्यवहारो धर्मसेतोस्तु लिङ्गम्।
त्यागोजपोऽध्ययनं ब्रह्मणां यद्योगोवित्तः सततं तं नतोऽस्मि ॥४॥
यमैः सदा नियमैश्चोपपन्नं विकल्पके निर्विकल्पे निषण्णम्।
भू देवानां शरणं वीतराग द्वेषं मुनिं संस्मराम्यप्रमत्तः ॥५॥

टिप्पणी— श्री रघुनाथ शर्मा जी ने महाराज करपात्री जी की प्रेरणा से "अहमर्थ समीक्षा नामकं ग्रन्थं" लिखा है। यदि कोई सज्जन उसे प्रकाशित करना चाहे तो सीधा शर्मा जी से सम्पर्क करें।

# तपः प्रतीकः करपात्री

—पं० रघुनाथ चतुर्वेदी, राजराजेश्वरी संस्कृत संस्थान—२, दशभुजी गनेश, मथुरा।

धर्मयात्रा कृतास्त्वेभि स्तदाऽऽ सेतुहिमालयम् ।
भ्रान्त्वा-भ्रान्त्वा च धर्मस्य स्वरूपं तैः प्रबोधितम् ॥ ४३ ॥
गता यत्र च विद्वद्भिस्तत्वज्ञैः साधुभिस्तथा ।
ज्ञातं स्वरूपं ह्येतेषां कृत शास्त्र विचारतः ॥ ४४ ॥
प्राक्तनैः स्वीय संस्कारैः स्तथा ऽपूर्वतपस्यया ।
शास्त्राभ्यासेन सततं दुर्धर्षत्वमवाप्नुवन् ॥ ४५ ॥
यत्र यान्ति समाजोऽपि तत्रस्थ विदुषां सदा ।
वचनामृत पानाय सतृष्ण इव लक्ष्यते ॥ ४६ ॥
रस रूपा कथास्तेषां श्रीमद्भागवते कृताः ।
शृण्वन्तः सततं विज्ञाः सामान्याश्चापि मानवाः ।
तृप्ति न यान्ति पानेन कस्तृप्तः सुधया भवेत् ॥ ४७ ॥
तदा ते वेद शास्त्राणां विद्वांसोऽप्रतिभा मताः ।
विद्वत्सु स्वीय देशस्य तत्पाण्डित्यं महाद्भुतम् ॥ ५१ ॥
ते पूर्वोत्तरयोरासन् विद्वांसः श्रेष्ठतां गताः ।
मीमांसयोर्न सन्देहो देशस्यास्य बुधेषुहि ॥ ५२ ॥
श्रेष्ठं यथाऽऽसीद् वैदुष्यं श्री करपात्रि स्वामिनः ।
तादृशन्न तथा ऽन्यत्र लोकेऽस्मिन् दृष्टि मागतम् ॥ ५९ ॥
विद्यारण्यादिभिः साम्यं तथा श्री मधुसूदनैः ।
सरस्वतीभिर्विद्वत्वे महत्वेन युतो ऽभवत् ॥ ६० ॥
परम्परायामेतेषांमांसनं श्री करपात्रिणः ।
महत्वपूर्णा विद्वांसो लोकेऽस्मिन्नात्र संशयः ॥ ६१ ॥
वेदा दर्शन शास्त्राणि राजनीतेर्विशुद्धता ।
भिन्न भाषास्वरूपन्तु दृश्यतेस्म च स्वामिनि ॥
अपरिग्रह त्यागस्य प्रवृद्धतपसस्तथा ।
प्रतीको मूर्तिमानासीत् ! करपात्रीति यः स्मृतः ॥
संस्कृतेः भारतीयायाः सभ्यतायाश्च धर्मणः ।
रक्षायां वेद शास्त्राणां यैः स्वं सर्वस्वमर्पितम् ॥
लोकेऽस्मिन्नग्र पङ्क्त्यां ये तद् रक्षायां प्रवर्द्धने ।
गण्यन्ते प्रथमा स्तेषु स्वामिनो नात्र संशयः ॥

# अभिनन्दन-पत्रम्

(निर्मातारः—कवितार्किकचक्रवर्ति—श्रीमन्महादेवशास्त्रिणः न्याय-व्याकरण-साहित्याचार्याः काशी-हिन्दू-विश्वविद्यालयस्थ प्राच्यविभागीय साहित्य प्रधानाध्यापकाः।)

श्रीमतां मान्यधन्यमूर्धन्यानां समस्तप्रपञ्चप्रचञ्चूर्यमाणचराचरप्राणिनिकुरम्बस्य समस्त-पुरुषार्थसार्थप्रसाधनोद्धुरे विश्वम्भरैकसमाश्रये महत्तमे तपसि सम्यग्वर्त्तमानानाम्प्रसन्नगभीरैः शान्ति-दान्तिरमणीयैः प्रसह्य द्विषतामपि हृदयानि प्रसादयद्भिस्तर्कानुसारिभिरपि शास्त्रानुहारिभिराद्यभगवदा-चार्यपादयुगमिवावतारयितु प्रवर्त्तमानानां वचननिचयैः करकुशेशयपात्रमात्रमुद्वहतामपि हस्तस्थितसम-प्रवदान्यधनिकधार्मिकाणां श्री १००८ स्वामि-हरिहरानन्दसरस्वती (करपात्रि) महोदयानां तत्र भवता-म्पूज्यपादानां सविधे समर्पित इन्द्रप्रस्थशतमुखकोटिमहायज्ञसमारोहावसरे 'इन्द्रप्रस्थसरयूपारीण' ब्राह्मणसभासदस्यैः सन्दर्भितः स्तुतिकुसुमाञ्जलिः।

धन्यास्ति भारतमही महिता मनोज्ञा मान्या मनोहरतमामरवासभूमेः।<br>
देवैरतो गुणगणा गणशः प्रगीता अस्याः श्रुतिस्मृतिपुराणपवित्रितायाः ॥ १ ॥

शान्ता नितान्तकरुणावरुणाधिवासा ब्रह्मावबोधमहनीयमहोपदेशाः।<br>
स्वात्मामृतोदधिवगाहनपूर्णकामाः सन्तोऽवतंसपदभाजनमेतदीयाः ॥ २ ॥

श्रीपूज्यपूज्यचरणा गरिमाभिरामा विक्रीडितम्भगवताऽपि यदीयधूलौ।<br>
तस्यास्य सर्वजगतां शिरसि स्थितस्य स्वात्माभिमानसदृशं किल किञ्चिदस्ति ? ॥ ३ ॥

देशस्य दुर्बलतमस्य विहीनशक्तेः स्वायत्ततावितिविघ्नितधर्मबुद्धेः।<br>
अल्पायुषोऽल्पविभवस्य परर्द्धि वृद्धयोः सत्साधनं किमु कथञ्चन कच्चिदस्ति ॥ ४ ॥

हस्तारविन्दपदभाजन भावितात्मन् ! लोकोत्तरप्रथितदिव्यतपः प्रभाव।<br>
ईशप्रसाधितगिराममलाधिवास ! अत्रावधानमवताम्भवतांविशिष्मः ॥ ५ ॥

भवदीयाः—

सभापतिः<br>
यमुनाधरज्योतिर्विदः

प्रधान मन्त्री<br>
शिवदीनमिश्रः

समस्त-सदस्यगणाश्च

८ फरवरी, १९४४ ई०

# स्तुति कुसुमाञ्जलिः

**रचयिता—नारायणप्रसाद द्विवेदी** कान्हपुर गणेशनगर निवासी,
धर्मसंघ मन्त्री ग्वालटोली गणेशनगर-कानपुर।

श्रीमदद्वैतसिद्धान्तनिर्धारक शाङ्करमतप्रचारक सर्वतन्त्रस्वतन्त्र परमहंस परिव्राजकाचार्य श्री ११०८ युक्त जगद्गुरु ज्योतिष्पीठाधीश्वर स्वामी ब्रह्मानन्दसरस्वतीसन्निधौ कान्हपुरे प्रवर्तमान शतमुखकोटिहोमात्मकयज्ञावसरे प्रस्तुते विदुषां सम्मेलने कान्हपुरीय ग्वालटोली गणेशनगरस्य धर्मसंघ-सदस्यैः श्रीमतामखिलागमावगाहनधीरधीविभवानां परमे तपसि स्थितानां ज्ञान-विज्ञानमहिम्ना भारते प्रसिद्धानामार्षधर्मप्रचारचारुचरितानां तत्र भवतां १००८ स्वामि हरिहरानन्द सरस्वती (करपात्रि) महोदयानामङ्घ्रिसरोरुहयोः सादरं सविनयं चार्प्यतेयं स्तुतिकुसुमाञ्जलिः।

ध्यायं ध्यायं हृदि दिविषदो विष्णुब्रह्मेशशक्रान स्मारं स्मारं विमलचरितान्मन्त्रमान्यान्मुनीन्द्रान।
श्रावं श्रावं स्मृतिषु विदितान्याज्ञवल्क्यादिमुख्यान् नामं नामं निखिल विबुधान्स्तौमि पादान्यतीनाम्॥

संविद्विलासविमुखी ममलेखनीयं स्तोतुं स्तवातिगुणमुत्सहते भवन्तम्।
यत्तत्क्षमस्व जड़तामवधार्य चास्याः प्रज्ञाविहीनविभवा न किमाचरन्ति॥

नीता त्वयास्य जनता नगरस्य देव पादारविन्दरजसैवकृतार्थतां च।
संसारसङ्कटसमाकुलितान्तराणां संरक्षणाय यतिवर्य मखोद्भवोयम्॥

विद्वत्व वा विशदतादिगुणप्रकर्षे धर्मोपदेशविषयेपियशस्तदीयम्।
नात्र प्रपूज्यतम भारतवर्ष एव विस्तारमेति सकलेपि महीतलेस्मिन्॥

प्रत्यग्भवैरभिनवैश्चपलैः प्रभावैः सम्मोहितान्निजजनान्कृपयोद्धरिष्यत्
सौख्यं निजं समपहाय सुदूरदेशादत्रागतोसि भगवंस्तदनुग्रहोयम्॥

वेदत्रयी विनिहितार्थसमर्थताय वर्णाश्रमाधिगततत्वविनिश्चयाय।
धर्मं सनातनमदः परिरक्षणाय स्वामिंस्तवागमनमत्र मुदे चिरन्न॥

पूर्वं विश्वसृजा प्रजास्ववनतिं बुध्वोप्तबीजस्ततः संसिक्ताङ्घ्रिपदः समृद्धविभवैः यद्भारतोयैर्नृपैः।
वेदोमार्यरहस्यवेदिहृदयैः संस्थाप्य यः पुष्पितः श्रीमान्यागतरुः स एप सफलः सम्वर्धितो राजते॥

श्रीमानच्छविचारचारुचरितःस्वाधीतशास्त्रोल्लस—ज्ज्ञाने नास्तमिता खिलारिभवनो मान्यः सतां सम्मतः।
भास्वद्भूति विभूषितोमलगुणग्रामाभिरामास्पदः सारासारविवेकवान्विजयते सत्पाणिपात्रं यतिः॥

कीर्तिर्यस्य जगत्रयाधिकतरा विद्यापि लोकोत्तरा प्रीतिर्यस्य महत्तरा मुररिपोः पादार्चने सत्तरा।
यः श्रीकान्तदयासुधार्द्रवपुषा दृष्टया समालोकितः सोयं वै यतिभूषणं विजयते सत्पाणिपात्रंयतिः॥

नानाकवीन्द्रवचनैरविचिन्तनीयां किन्ते स्तुतिं विरचयामि दयैकसिन्धो!
नत्वा ततस्तु भवदीयपदारविन्दं संप्रत्यहं च विरमामि यतीन्द्रवर्य!॥

(संवत २००१ वि० चैत्र शु० १५ शनौ)

# महान् ग्रंथकार स्वामी करपात्री जी महाराज

—श्री भीष्मदत्त शर्मा, एम० ए०, एम० एड०, पी-एच० डी० मेरठ।

विश्ववंद्य परमपूज्य धर्मसम्राट् अनन्त श्रीविभूषित श्री स्वामी करपात्री जी महाराज वर्तमान युग के महान् विचारक, उत्कृष्ट तत्त्ववेत्ता: विलक्षण दार्शनिक, ओजस्वी वक्ता, उद्भट विद्वान्, अद्भुत लेखक, वेद-शास्त्रों के मर्मज्ञ, कर्म ज्ञान-भक्ति के साक्षात् स्वरूप तथा त्याग-वैराग्य के दैदीप्यमान् सूर्य थे। जिस प्रकार आद्य जगद्गुरु भगवान् शंकराचार्य के सम्बन्ध में यह प्रसिद्ध है कि वह वेद में ब्रह्मा के समान, वेदांगों में गार्ग के समान तथा उनके तात्पर्य के निर्णय करने में बृहस्पति के समान, वेद-विहित कर्म के वर्णन करने में जैमिनि के समान और वेद वचन के द्वारा प्रकट किये गये ज्ञान के विषय में महर्षि व्यास के समान थे, उसी प्रकार आधुनिक विद्वानों की दृष्टि में पूज्य स्वामी जी महाराज के चमत्कारी व्यक्तित्व के चैतन्य का भक्तिभाव, आद्य शंकराचार्य का ज्ञान, समर्थ स्वामी रामदास का राष्ट्र प्रेम, विवेकानन्द का प्रबुद्ध कर्म भाव तथा बृहस्पति कामन्दक का उदात्त राजनैतिक उद्बोधन कूट-कूटकर भरा हुआ था। उन जैसा चतुर्मुखी प्रतिभा सम्पन्न तथा जनमानस पर अमिट छाप छोड़ने वाला महान् व्यक्तित्व आचार्य शंकर के पश्चात् इतिहास में मिलना दुर्लभ है। वह धर्म, संस्कृति एवं अध्यात्म के महान् उन्नायक थे। वेदादि शास्त्रों के प्रामाण्य स्थापन तथा मान्यता के लिये उन्होंने देश के कोने-कोने में जो प्रवचन किये और जो साहित्य सर्जन किया वह मानव जाति की अमूल्य निधि है। महान् ग्रंथकार के रूप में उनकी प्रसिद्धि युग युगों तक लोगों को धर्म संस्कृति एवं अध्यात्म का यथार्थ दर्शन कराती रहेगी। ५० से ऊपर लिखे हुये उनके अनमोल ग्रंथों में धर्म, संस्कृति, अध्यात्म, आस्तिक भाव तथा शास्त्रों के प्रामाण्य का प्रतिपादन बड़े अनूठे ढंग से हुआ है। 'मार्क्सवाद और रामराज्य', 'रामायण मीमांसा', 'विचार पीयूष', 'भक्ति सुधा', तथा 'वेदार्थ पारिजात' पूज्य धर्मसम्राट् के ऐसे पाँच प्रतिनिधि महाग्रन्थ हैं जिनमें राजनीति, इतिहास, समाज दर्शन भक्ति दर्शन तथा वेदशास्त्रानुमोदित विचारधारा की मार्मिक विवेचना हुई है।

## वेदार्थ पारिजात

परमपूज्य अनन्त श्री विभूषित जगद्गुरु शंकराचार्य पुरी पीठाधीश्वर श्री स्वामी निरंजनदेव तीर्थ जी महाराज तथा देश के अन्यान्य मूर्धन्य विद्वानों ने जिस महाग्रंथ को वर्तमान शताब्दी का सर्वश्रेष्ठ ग्रन्थ बताया है उस 'वेदार्थ पारिजात' के सम्बन्ध में कुछ भी लिखना सूर्य को दीपक दिखाना है। विश्ववंद्य धर्मसम्राट् अनन्त श्री विभूषित ब्रह्मस्वरूप श्री स्वामी करपात्री जी महाराज की यह अनुपम रचना हिन्दू धर्म का विश्वकोश है। आजकल पत्र-पत्रिकाओं, विद्वानों तथा यत्र-तत्र-सर्वत्र 'वेदार्थ पारिजात' चर्चा का विषय बना हुआ है। वेद को हमारे यहाँ अखिल धर्म का मूल माना जाता हमारे समस्त सिद्धांतों, आचार-विचारों तथा मान्यताओं का आधार वेदमूलक होने से लोगों में वैदिक

ग्रन्थों के प्रति अपार श्रद्धा होना स्वाभाविक है। इसी जन विश्वास का अनुचित लाभ उठाकर बहुत से लोगों ने वेदों के नाम पर अनेक प्रकार के भ्रमों द्वारा धार्मिक क्षेत्र में भारी अव्यवस्था फैला रखी है। अपने यहाँ वेदों के अर्थ का विचार करने की विशिष्ट पद्धति का वर्णन मीमांसा तथा वेदांत आदि ग्रंथों में मिलता है किन्तु उनको न जानकर मनमाने ढंग से वेदभाष्य करने का आज फैशन बन गया है। देश में चारों ओर भाष्यों की बाढ़ आ गयी है। आये दिन समाचारों पत्रों में वेदभाष्यों के नये-नये विज्ञापन पढ़कर सामान्य व्यक्ति यह निर्णय नही कर पा रहा है कि उसे कौन सा भाष्य पढ़ना चाहिये। वेद-भाष्यों के नाम पर चली इस दुकानदारी से ऊबी हुई जनता किंकर्तव्यविमूढ हो गयी है। वेदों के पूर्ण मर्मज्ञ विद्वान् आचार्य वेंकटमाधव, सायण महीधर तथा उव्वट आदि की उपेक्षा और वेद के अंगों, उपांगों तथा स्मृतियों आदि का यथावत् बोध न होने से आधुनिक तथाकथित वेदभाष्यकार जनता का कितना अहित एवं शोषण कर रहे हैं—इसका पता 'वेदार्थपारिजात' के अध्ययन से चलता है।

वेद शास्त्र विरोधी मतों का खंडन किये बिना स्वामी करपात्री जी की लौह लेखनी कभी चैन से नहीं बैठती थी। इस महान् ग्रंथ की रचना के उद्देश्यों पर प्रकाश डालते हुये ग्रंथकार की यही लोकोपकार की भावना इन शब्दों में प्रकट हो रही है – जिनके पिता, पितामह प्रभृति पूर्व पुरुष सदा वैदिक धर्म के अनुयायी रहे हैं, जिनके मन में सदा से वैदिक सद्विचारों का अनुशीलन चलता रहा है, ऐसे सज्जन व्यक्ति वेदशास्त्र के साथ द्वेष भाव रखने वाले व्यक्तियों के द्वारा भाष्य विरुद्ध अर्थ को सुनकर दुःखी हो जाते हैं। उनके इस क्लेश को दूर करने के लिये हमने यह श्रम किया।

"येषां पितृपितामहादिपुरुषा आसन् सदा वैदिका। ये स्वान्ते परिशीलयन्ति सततवेदान् सदर्थान्वितान् ॥
वेदद्विड्भिरुदीरितानभिनवानर्थानुदीक्ष्य स्वयं। ये क्लिश्यन्ति महत्तदर्थमखिलो ह्यस्माकमेष श्रमः ॥३२॥

(वेदार्थ परिजात पृ० ३)

कितना उदार भाव था इस महापुरुष में। इसी जनपीड़ा से द्रवीभूत इस सन्त ने अपना समस्त जीवन वेदशास्त्रों के उद्धार के लिये समर्पित कर ऐसा विलक्षण साहित्य मानव जाति को दिया है जो युग-युगों तक धर्म, अध्यात्म तथा संस्कृति की ज्योति को प्रज्वलित रखेगा। इतना महान् कार्य करने पर भी कुछेक नासमझ व्यक्तियों तथा पत्र-पत्रिकाओं का पूज्य स्वामी जी के बारे में अनर्गल प्रलाप करना देश का दुर्भाग्य ही कहा जायेगा। वस्तुतः यह तो इस युग के लोगों का सौभाग्य ही था कि उन्हें आचार्य शंकर भगवत्पाद के उपरान्त पूज्य करपात्री जी महाराज के रूप में दिव्य विभूति का दर्शन, संभाषण, उद्बोधन तथा लेखन आदि की उपलब्धि हुयी।

रॉथ, मैक्डोनल तथा मैक्समूलर आदि पाश्चात्य विचारकों एवं तदनुयायी भारतीय (जैसे आर्यसमाजी स्वा० दयानन्द आदि) विद्वानों के भाष्यों को देखने से वेदों की एक वाक्यता पर सन्देह होने लगता है। संस्कृत का अधिक प्रचार न होने से लोगों में आचार्य सायण आदि के प्रामाणिक एवं यथार्थ भाष्यों को पढ़ने की प्रवृत्ति का लोप होता हुआ दिखाई पड़ रहा है। मनमाने ढंग से लिखे गये इन नवीन भाष्यों में किसी सनातन आध्यात्मिक विचारधारा के दर्शन न होने से तत्वजिज्ञासु को निराश होना पड़ता है। इन नवीन भाष्यकारों ने वेदों की भानमती का पिटारा बना दिया है। जिसके

मन में जो अर्थ आया लिख मारा। इन्द्र, वरुण, अग्नि, यम, सविता तथा ब्रह्म आदि एक ही प्रकार के शब्दों का कहीं कुछ अर्थ कर दिया और कहीं कुछ इस प्रकार के ऊटपटांग भाष्यों के आधार पर आज 'सरिता' जैसी पत्रिकाएं वेदशास्त्रों के सम्बन्ध में अनर्गल प्रचार कर रही हैं। इन घटिया किस्म के भाष्यों को पढ़कर लोगों में अनेक प्रकार की भ्रान्तियाँ, दुर्भावनाएं तथा नास्तिकता बढ़ती जा रही है। ब्राह्मण, आरण्यक एवं उपनिषद् भाग को वेद न मानना तथा केवल चार पोथियों के वेद होने के सिद्धांत को प्रचारित कर इन भाष्यकारों ने धार्मिक जनों में बड़ी भारी अव्यवस्था, अश्रद्धा एवं अनास्था को जन्म दिया है। महर्षि पतंजलि के अनुसार वेदों की ११३१ शाखाएं हैं। किन्तु आर्यसमाजी भाष्यकारों ने इनमें से केवल चार शाखाओं को वेद मानकर शेष ११२७ शाखाओं को वेदत्व से बहिष्कृत कर रखा है जिससे वैदिक धर्म के यथार्थ सिद्धांतों का ही सफाया हो गया है। इस प्रकार के पूर्वाग्रहों, दुराग्रहों एवं मिथ्याग्रहों से ग्रस्त तथाकथित भाष्यकारों द्वारा वेदों के वास्तविक स्वरूप को तिरोहित हुआ जानकर श्री स्वामी जी महाराज ने हिन्दू धर्म की रक्षार्थ यह महान प्रयास किया है। अपनी समस्त साधना, तपश्चर्या, ज्ञान, वैराग्य भक्ति एवं विद्वत्ता आदि को इस ग्रंथ-रत्न में उड़ेलकर धर्मसम्राट् अभिनव शंकर ने अन्धकार में भटकी धर्मपिपासु मानव जाति का अविस्मरणीय उपकार किया है। ब्रह्मलीन होने से पूर्व पूज्य स्वामी जी ने 'वेदार्थ-पारिजात' के बारे में कहा था – हमें जो कुछ कहना था, लिखना था, सब 'वेदार्थ-पारिजात' में लिपिबद्ध कर दिया है, उसी के प्रचार-प्रसार की आवश्यकता है।

श्री राधाकृष्ण धानुका प्रकाशन संस्थान, कलकत्ता से प्रकाशित तथा धर्मसंघ शिक्षा मंडल, दुर्गा कुण्ड, वाराणसी से प्राप्य हिन्दू धर्म का यह महान ग्रन्थ 'वेदार्थ-पारिजात' अभी दो खण्डों में प्रकाशित हुआ है। इन दोनों भागों में पूज्य स्वामी जी ने वेदभाष्य की भूमिका प्रस्तुत की है। आज देशी-विदेशी, नास्तिक-आस्तिक, आधुनिक-प्राचीन तथा सुधारवादी-परम्परावादी दार्शनिकों, विद्वानों एवं आचार्यों ने जितना कुछ वेदों के सम्बन्ध में लिखा है उसकी युक्तियुक्त तथा शास्त्र सम्मत समालोचना कर श्री स्वामी जी ने इस विशालकाय ग्रंथ में वेद के प्रामाणिक स्वरूप तथा सिद्धांतों की स्थापना की है। इसीलिए इस बेजोड़ ग्रंथ को पढ़कर निष्पक्ष विद्वानों को अनुभव हुआ कि आज तक वेदभाष्य के नाम पर सैंट ही बिकता रहा, असली इतर तो अब मिला है। श्री करपात्री जी महाराज के प्रतिपादन की विशेषता है कि उसमें कहीं भी पूर्वाग्रह तथा बलात् स्वमतपोषक अर्थ निकालने की प्रवृत्ति के दर्शन नहीं होते हैं। शब्द और अर्थ के स्वरूप तथा सम्बन्ध पर बड़ा व्यापक शास्त्रार्थ स्वामी जी की लेखनी का चमत्कार है। धर्मकीर्ति जैसे बौद्ध दार्शनिक के वेद विरोधी मत का जैसा प्रभावशाली खंडन इस ग्रंथ में हुआ है वैसा अन्यत्र दुर्लभ है। अनेक दार्शनिक, धार्मिक तथा आध्यात्मिक विवादों का शास्त्र-सम्मत समाधान इस अनुपम ग्रंथ में किया गया है। वेदों का तात्पर्य ब्राह्मण भाग, (जिसमें उपनिषद्, आरण्यक आदि सम्मिलित हैं) शिक्षा-कल्प-व्याकरण-निरुक्त-छंद-ज्योतिष इन छः अंगों, न्याय-वैशेषिक सांख्य-योग, मीमांसा-वेदांत इन छः दर्शनों एवं पुराणेतिहास आदि समस्त

"जैसे कोई परमकारुणिक चिकित्सक, किसी अदीर्घदर्शी अबोध शिशु का कुपथ्य में अभिनिवेश और महौषध एवं पथ्य में विद्वेष देखकर, महौषधि को ही परम मनोहर तदभिलषित रूप में प्रगट करके प्रदान करता है, ठीक वैसे ही भगवान् अपने उसी वेदान्तवेद्य अखण्ड अनन्त परमानन्दघन निराकार निर्विकार लोचनातीत स्वरूप को अपनी अचिन्त्य दिव्य लीलाशक्ति के दिव्य प्रभाव से, ऐसे सर्वमनोहर सुमधुर स्वरूप में प्रगट करते हैं, कि जिसके दर्शन-स्मरण-श्रवण से ऐसा कौन सचेतन है जो मोहित न हो जाय ?

'कहहु सखी अस को तनुधारी । जो न मोह यह रूप निहारी ।'
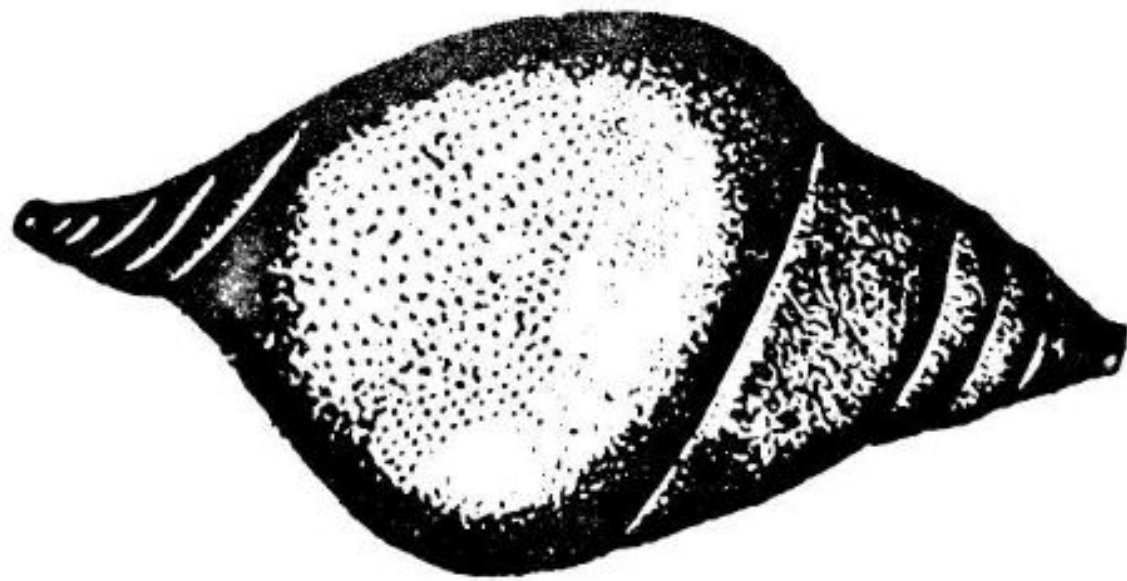
धर्म-शास्त्रों के द्वारा ही जाना जा सकता है। अतः विभिन्न श्रुतियों (वेद-मंत्रों), स्मृतियों (धर्म शास्त्रों) तथा दार्शनिक विचारों में समन्वय एवं एक वाक्यता करके वेदमन्त्रों का अर्थ करने की प्राचीन एवं शास्त्र समस्त (सायण आदि आचार्यों द्वारा अनुमोदित) पद्धति का आश्रय लेकर पूज्य स्वामी जी द्वारा किये गये भाष्य को देखने से पता चलता है कि इन तथाकथित नवीन भाष्यकारों ने अपना उल्लू सीधा करने के लिये अर्थ का कितना अनर्थ किया है? यही कारण है ऐसे अपरिपक्व वेदभाष्यकारों ने अपनी दुकानदारी बंद होते देख पूज्य स्वामी जी के सम्बन्ध में अनर्गल प्रलाप से अपनी जीविका बचाने का असफल प्रयास किया।

वेद के वास्तविक स्वरूप और प्रामाण्य, मंत्र भाग की भाँति ब्राह्मण-आरण्यक-उपनिषद् आदि का वेद होना, मूर्ति पूजा की शास्त्र सम्मतता, अवतारवाद की वैदिकता श्राद्ध-तर्पण की कर्तव्यता, गोरक्षा की अनिवार्यता, मन्त्रों की यज्ञपरकता, ब्रह्म विद्या की महत्ता, वेदों के पठन-पाठन की पद्धति, उनकी अपौरूषेयता एवं अनादित्व आदि ऐसे अनेक महत्त्वपूर्ण विषय हैं जिन पर श्री स्वामी जी की अद्‌भुत लेखनी का चमत्कार पाठक को चमत्कृत किये बिना नहीं रहता है।

स्वामी दयानन्द की ऋगवेदादि भाष्य भूमिका में प्रकट मत का खण्डन करते हुये श्री स्वामी जी ने वेदार्थ पारिजात भाग १ के पृष्ठ ४१६ पर लिखा है -

"धर्म अर्थ काम और मोक्ष की सिद्धि के बिना परमानन्द की प्राप्ति ही नहीं होगी, यह कहना भी पुरुषार्थ के तत्त्व को न समझ पाने के कारण है, क्योंकि इस परिस्थिति में इस विकल्प का कोई उत्तर न बन सकेगा कि परमानन्द मोक्षस्वरूप पुरुषार्थ से भिन्न है अथवा अभिन्न? पहला विकल्प नहीं बन सकता, अर्थात भिन्न सिद्ध नहीं किया जा सकता क्योंकि मोक्ष से भिन्न कोई परमानन्द लोक में प्रसिद्ध नहीं है। दूसरा विकल्प भी इसलिए नहीं बन सकता अर्थात ज्ञान को परमानन्द से अभिन्न भी नहीं कह सकते कि वह स्वयं अपना ही कारण नहीं हो सकता। क्या धर्म अर्थ और काम भी परमानन्द के जनक हैं अथवा इनसे युक्त मोक्ष ही परमानन्द का जनक होगा? पहले पक्ष में त्रिवर्ग से भी परमानन्द की अधिगति हो जाने पर मोक्ष का क्या प्रयोजन रह जायेगा। द्वितीय पक्ष भी इसीलिए नहीं बनेगा कि ऐसा मानने पर संन्यास की उपपत्ति नही बन सकेगी। वास्तव में सातिशय सुख काम, निरतिशय सुख मोक्ष कहलाता है। धर्म और अर्थ इनके साधन हैं। परमेश्वर आप्त काम होते हुये भी प्रजा के हित की इच्छा से अनादि सिद्ध वेद को अधिकारियों को देता है। कल्प के प्रारम्भ में वेद सम्प्रदाय की प्रवृत्ति को ही परमेश्वर से वेद का प्रादुर्भाव माना जाता है। नित्य वेद की इससे भिन्न कोई उत्पत्ति नहीं बन सकती। वेद ज्ञान रूप नहीं है, किन्तु यह नियत आनुपूर्वी वाली अपौरुषेय शब्द राशि है। सृष्टि व प्रलय को न मानने वाले पूर्व मीमांसक के मत से ये वेद स्वरूपतः नित्य हैं और उत्तर मीमांसक (वेदान्ती) के मत से सृष्टि से लेकर प्रलयपर्यन्त स्थिर रहने के कारण वेद प्रवाह रूप से नित्य हैं।

पृष्ठ ७९४ पर कहा है—

वेद के सर्व ज्ञानमय होने पर भी उसी से कम्प्यूटर, राकेट आदि के निर्माण की विद्या गतार्थ नहीं हो जायेगी। धर्म ज्ञान और ब्रह्मज्ञान ये ही साक्षात् अथवा परम्परा से सभी ज्ञानों के मूल में हैं। वेद इनके प्रकाशक हैं, अतः सूत्र रूप से वेद सभी विषयों के प्रकाशक माने ही जा सकते हैं। श्री शंकराचार्य ने 'अनेक विद्याओं के उपबृंहक होने से, प्रदीप के समान सभी वस्तुओं के प्रकाशक होने से, वह सर्वज्ञ कल्प है' इस उक्ति के अनुसार अंग और उपांग सहित वेद को सभी विषयों का प्रकाशक माना है। उनकी दृष्टि में सर्वज्ञ के सभी ज्ञानों से संलग्न शब्दों की अनन्तता के कारण स्वभावतः सभी अर्थों की प्रकाशकता बन सकेगी। 'वेद अनन्त हैं' इस श्रुति से भी यही अर्थ सिद्ध होता है। मानव बुद्धि गम्य ११३१ शाखा वाले मन्त्र ब्राह्मणात्मक वेद में मानव के लिये अपेक्षित सभी विषयों की प्रकाशकता हो ही सकती है।

इससे स्पष्ट है कितने गहन अध्ययन व मनन के उपरान्त महाराज श्री ने इस ग्रन्थ का प्रणयन किया है।

**रामायण मीमांसा—एक समग्र दर्शन**

ब्रह्मस्वरूप धर्मसम्राट् अनन्त श्री विभूषित परम पूज्य श्री स्वामी करपात्री जी महाराज की लोह लेखनी से जिन अनमोल ग्रंथों का प्रणयन हुआ उनमें 'रामायण मीमांसा' का महत्वपूर्ण स्थान है। यह ग्रंथरत्न ११०० पृष्ठों से अधिक का होता हुआ भी पाठकों के लिये आद्योपान्त रोचक एवं सुबोध बना रहता है। सं० २०३४ में श्री दुर्गाकुण्ड, वाराणसी से प्रकाशित इस ग्रंथ के बारे में कुछ भी लिखना सूर्य को दीपक दिखाना है। पूज्य स्वामी जी महाराज की वैसे तो समस्त कृतियाँ अद्भुत एवं बेजोड़ हैं किन्तु इस ग्रन्थ में उनकी जिस प्रतिभा के दर्शन होते हैं उसका अन्यत्र मिलना दुर्लभ है।

हिन्दी साहित्य के विद्वान् स्व० डॉ० कामिल बुलके के शोधग्रंथ 'रामकथा' का जब पूज्य धर्मसम्राट् ने अवलोकन किया तो उसमें हिन्दू धर्म के यथार्थ स्वरूप को ध्वस्त करने का ही प्रयास दृष्टिगोचर हुआ। उस समय कितनी मर्मान्तिक वेदना हुई होगी उस मनीषी को? इसका पता तो उन्हीं को लगेगा जो 'रामायण मीमांसा' धैर्यपूर्वक आद्योपान्त अध्ययन करेंगे। भगवान् श्रीराम के सम्बन्ध में किसी अहिन्दू लेखक का ग्रंथ निर्माण करना तो अवश्य प्रशंसनीय है किन्तु लाखों वर्षों से करोड़ों भारतीयों के आराध्य मर्यादा पुरुषोत्तम भगवान् श्रीराम के परम्परागत एवं यथार्थ स्वरूप को विकृत करके प्रस्तुत करने का किसी को अधिकार नहीं है। रामायण एवं श्रीराम के सम्बन्ध में श्री बुल्के की मनमानी कल्पनाएं पढ़कर किस शास्त्र-विश्वासी हिन्दू को वेदना नहीं होगी?' डॉ० बुल्के के इसी ग्रंथ 'रामकथा' को पढ़कर भारतीय जनमानस के परम पारखी तथा वेदशास्त्रों के मर्मज्ञ विद्वान् एवं हिन्दू जाति के परम हितैषी पूज्य स्वामी जी की आत्मा उसी प्रकार करुणाक्रन्दन कर उठी जिस प्रकार आदि कवि महर्षि वाल्मीकि व्याध द्वारा मारे गये क्रौंच पक्षी को देखकर भाव विह्वल हो उठे थे। इसी अवसर पर महर्षि के शोकाकुल अन्तस्तल से निःसृत अमर वाणी 'रामायण' जन-जन का हृदयहार बनी हुयी है। इसी प्रकार धर्मसम्राट् की व्यथा की परिणति हुयी 'रामायण मीमांसा में।

भगवान् राघवेन्द्र श्रीराम तथा भगवती जगदम्बा माँ सीता महारानी के परम पावन एवं लोकप्रिय चरित्र को अपने सिद्धांतों के सांचे में ढालने के चक्कर में जैन एवं बौद्ध कवियों तथा लेखकों ने किस प्रकार कलुषित किया है ? इसका जीता-जागता उदाहरण है जैन मुनि तुलसी की 'अग्नि परीक्षा'। बौद्ध रामायणों में भगवान् श्रीराम और भगवती सीता को भाई-बहन बताकर हिन्दू मर्यादा के विरुद्ध उनका विवाह होना लिखा है। जैन रामायणों में भी इसी प्रकार की अनैतिक कल्पनाएं, जैसे श्रीराम और सीता जी की जैन दीक्षा तथा लक्ष्मण जी का नरक गमन आदि, भरी पड़ी हैं। स्व० बुल्के का शोध प्रबन्ध भी पूर्वाग्रह से मुक्त नहीं है। उन्होंने स्थान-स्थान पर यह दिखाने का प्रयास किया है कि भगवान् श्रीराम विष्णु भगवान् के अवतार नहीं हैं। वाल्मीकि रामायण के बाल-कांड, उत्तरकांड तथा शेष काण्डों के अनेक स्थल बाद के जोड़े गये हैं। रामायण का मूल रूप प्रचलित रामायण से भिन्न था और वर्तमान रामायण धीरे-धीरे वर्तमान रूप में विकसित हुयी है। इस प्रकार उनके अनुसार रामायण अनेक प्रकार के प्रक्षेपों, बाद के मिलाये हुये श्लोकों एवं अनेक नवीन कल्पनाओं का पुलिंदा होने से कोई ऐसा विश्वसनीय एवं सत्य इतिहास नहीं है जिस पर हिन्दू जाति गर्व कर सके।

रावण के दस सिर होना, हनुमान का समुद्र लांघना एवं सूर्य को निगलना, कुम्भकर्ण का छः माह तक सोना, इन्द्रादि देवताओं का प्रकट होकर वरदान देना और सीता जी की अग्नि-परीक्षा आदि बुल्के की दृष्टि से काल्पनिक हैं। इसी प्रकार की अनर्गल कल्पनाओं का आश्रय लेकर आजकल विश्वविद्यालयों, महाविद्यालयों तथा शोधशालाओं में शोध कार्य हो रहे हैं। ऐसे शोध ग्रन्थों की निःसारता को धर्मसम्राट् ने बखूबी दिखाया है। इन्हीं ग्रन्थों का दुष्परिणाम है कि आज लोगों पर प्राचीन ग्रंथों में प्रक्षेप ढूंढ़ने का भूत सवार हो गया है। एक आर्यसमाजी का सम्पूर्ण वाल्मीकि रामायण को ६००० श्लोकों तक सीमित करना इसी दुष्प्रवृत्ति का परिणाम है। हम सभी जानते हैं कि रामायण के अन्तः साक्ष्य के आधार पर २४००० श्लोकों का होना सिद्ध होने पर भी अपने अनुकूल श्लोकों को स्वीकार कर लेना तथा शेष को प्रक्षिप्त बता देना आज की रिसर्च का नमूना है। श्री बुल्के ने पूर्वाग्रहों से ग्रस्त होकर अपने ग्रन्थ में पदे-पदे यह दिखाने का प्रयास किया है कि वाल्मीकि रामायण आर्ष ग्रंथ न होकर कल्पनाओं, झूठी घटनाओं, एवं मिथ्या गप्पों का बंडल है। यह बड़ा भयंकर षडयंत्र है जो आज इस प्रकार के अवांछनीय साहित्य के रूप में चला हुआ है। पूज्य स्वामी जी ने महती कृपा करके इस षडयन्त्र का भंडा फोड़ करने के लिये अपने इस अद्भुत ग्रंथ में उपयुक्त प्रकार के भ्रांत एवं तर्कहीन विचारों को युक्तियुक्त तथा शास्त्र सम्मत ढंग से निराकृत किया है। यह विशालकाय ग्रंथ 'रामायण मीमांसा' उन सभी शोधकर्ताओं, धार्मिक जनों एवं जिज्ञासुओं के लिये पठनीय है जो रामायण के रहस्य को सांगोपांग जानना चाहते हैं। ग्रंथ में उद्धृत लगभग ६८४ सन्दर्भ ग्रंथों की सूची अनुक्रमणिका में ग्रंथ के अन्त में परिशिष्ट रूप से दी गयी है जिसमें न केवल अनेक भारतीय भाषाओं के ग्रंथों की नामावलि है अपितु विश्व की अनेक विदेशी राम ग्रंथों का भी उल्लेख किया गया है जिससे ग्रंथ की उपादेयता वृद्धि के साथ साथ स्वामी जी की विलक्षण प्रतिभा एवं अध्यवसाय की

भी इनक पाठक को मिलती है। एक बार भी शांतचित्त होकर धैर्यपूर्वक मनन करने से रामायण एवं श्रीराम से सम्बद्ध सभी प्रश्नों का यथार्थ रूप में समाधान हो जाता है।

●●

**विचार-पीयूष-यथा नाम तथा गुण**

धर्मसंघ, दुर्गाकुण्ड, वाराणसी से १९७५ में प्रकाशित 'विचार-पीयूष' परमपूज्य ब्रह्मस्वरूप धर्मसम्राट् अनन्त श्री विभूषित श्री स्वामी करपात्री जी महाराज का ऐसा अनमोल ग्रंथ है जिसका अनुशीलन करने पर पाठक को अमृतानन्द की उपलब्धि होती है। इस महाग्रंथ में ६५० से अधिक पृष्ठों में पूज्य स्वामी जी ने जीवन के विभिन्न क्षेत्रों में भारतीय वैदिक दृष्टिकोण का बड़े प्रभावशाली ढग से उपस्थापन किया है। स्वामी जी की लेखनी की यह विशेषता रही है कि वेदशास्त्र सम्मत विचारधारा का ही प्रतिपादन उसके द्वारा होता रहा है। वेदशास्त्रानुमोदित हिन्दू-समाज-दर्शन की जैसी युक्तियुक्त मीमांसा उनके ग्रंथों में मिलती है वैसी अन्यत्र मिलनी सम्भव नहीं है। स्वामी जी के इस ग्रंथ में विचारों का पीयूष संगृहीत होकर यथा नाम तथा गुण की कहावत को चरितार्थ कर रहा है। आज के हिन्दू समाज में धर्म की अवमानना से उसकी मरणासन्न अवस्था को देखकर महान् मनीषी स्वामी जी की यह लेखन-साधना इस समाज के लिये संजीवनी सिद्ध हो सकती है। हिन्दू के लिये आज के चुनौती भरे वातावरण में उसके हित की घोषणा करने वाले नेताओं, लेखकों, भाषणदाताओं तथा विचारकों की बाढ़ आयी है किन्तु वेदशास्त्रानुमोदित धर्म मार्ग को छोड़कर हिन्दुत्व का कौन-सा आधार है? इस महान् प्रश्न की उपेक्षा सर्वत्र दृष्टिगोचर हो रही है। वर्तमान शताब्दी का यह सौभाग्य ही रहा कि उसे परमपूज्य स्वामी करपात्री जी महाराज जैसा धर्मविचारक मिला जिसने गत ४०-५० वर्षों में निरन्तर लिखकर हिन्दू समाज को उसका यथार्थ स्वरूप दिखाया। 'विचार-पीयूष' ऐसा दर्पण है जिसमें हम अपनी दुर्बलताओं को भी देख सकते हैं और उनका शास्त्र सम्मत समाधान भी प्राप्त कर सकते हैं।

वैदिक दृष्टिकोण के सर्वथा विरोधी लोगों द्वारा सनातन धर्म के सिद्धान्तों की निन्दा करना या उसका विकृत रूप में उपस्थापन करना उतना घातक नहीं होता है, क्योंकि जन-साधारण उनके धर्म विरोधी दृष्टिकोण से परिचित होता है, किन्तु जो धर्म का मुखौटा लगाकर पाश्चात्य प्रभाव से या अपने स्वार्थ विशेष से धर्म का भ्रामक रूप प्रस्तुत करते हैं, उनमें विशुद्ध वैदिक दृष्टिकोण की महती क्षति होने की सम्भावना रहती है। इस पुस्तक में पूज्य स्वामी जी ने न केवल जीवन के विभिन्न क्षेत्रों में भारतीय दृष्टिकोण का प्रतिपादन शास्त्र सम्मत ढंग से किया है, वरन् जो विचारधारा ज्ञात-अज्ञात रूप में पाश्चात्य दृष्टिकोण एवं दर्शन से प्रभावित होकर आज के हिन्दू-नेताओं के मन-मस्तिष्क को आक्रान्त किये हुये हैं, उसका युक्तियुक्त ढंग से निराकरण भी इस ग्रंथ में उन्होंने किया है। भविष्य में ऐसी अधकचरी विचारधारा को ही सामान्यजन धर्म का यथार्थ स्वरूप मानकर मूल विशुद्ध वैदिक सिद्धान्त से भ्रष्ट हो सकते हैं। प्रायः वैदिक धर्मानुयायी विद्वान् इसके विरोध में कुछ नहीं लिखते हैं। वस्तुतः सनातन धर्म के विशुद्ध दृष्टिकोण को जनता के सम्मुख प्रस्तुत करने एवं विरोधी विचारों के

प्रमाणयुक्त खंडन की महती आवश्यकता थी। इसी की पूर्ति के लिये पूज्य स्वामी जी का समस्त प्रयास रहा है। सचमुच सनातन धर्म के क्षेत्र में उन जैसा विचारक, लेखक, दार्शनिक वक्ता एवं विद्वान् गत अनेक शताब्दियों में नहीं हुआ है। इसी दृष्टि से उनका यह महान् प्रयास मननीय एवं पठनीय है।

'विचार-पीयूष' तीन भागों में विभक्त महाग्रन्थ है। प्रथम भाग में उनके द्वारा किये गये भारतीय राजनीति के विवेचन को पढ़कर अपने देश की प्राचीन राजनीति का बोध होता है। स्वामी जी ने 'वेदों से स्मृतियों तक', 'महाभारत की दृष्टि में', 'नीतिकारों की कसौटी पर', 'कवियों की काव्य कला में', 'तत्त्वज्ञान और वर्णाश्रम धर्म' और 'शास्त्रोक्त धर्म एवं भगवन्नाम' इन छः प्रकरणों में शुद्ध भारतीय राजनीति वर्णाश्रम की उपयोगिता धर्म की परिभाषा व लक्षण तथा भगवन्नाम की महत्ता का इतना सुन्दर वर्णन किया है कि इसको पढ़ते हुये वर्तमान राजनीति के दोष पाठक के स्मृति-पटल पर सजग हो उठते हैं। यह भाग उन लोगों के लिये अत्यन्त उपादेय है जो प्राचीन भारत में किसी निश्चित राजनीतिशास्त्र व धर्म के होने से इन्कार करते हैं।

द्वितीय भाग तो इस ग्रंथ का हृदय ही है। पूज्य स्वामी जा की बहुमुखी प्रतिभा एवं लेखन-शक्ति की उत्कृष्टता का अनुभव यहाँ पदे-पदे होता है। 'क्या वेद-शास्त्र का प्रामाण्य मानना अपकर्ष ?' इस प्रकरण में उन सभी शंकाओं, आक्षेपों तथा आरोपों का उन्मूलन किया गया है जिन्हें आजकल के नेता आड़ बनाकर भोली-भाली जनता को ठगते हैं। वेदशास्त्र, पुराण, रामायण, महाभारत तथा मन्वादि स्मृतियों में अपनी स्वार्थ सिद्धि के योग्य अंशों को प्रमाण रूप से उद्धृत करना और शेष को प्रक्षिप्त कह देना या अस्वीकार देना आज का फैशन बन गया है। प्रसिद्ध हिन्दू नेता एवं आर० आर० एस० के प्रमुख श्रद्धेय मा० स० गोलवलकर जी के ग्रंथ 'विचार-नवनीत' के ये शब्द वेदशास्त्रों के प्रामाण्य का कितना उपहास करते हैं—"हमारी सांस्कृतिक परम्परा का दूसरा विशिष्ट पहलू यह है कि हमने किसी भी ग्रन्थ को अपने धर्म और संस्कृति की एकमेव सर्वोच्च सत्ता नहीं माना।" पूज्य स्वामी जी तथा समस्त वैदिक सनातनी विद्वानों की मान्यता सर्वथा इसके विपरीत है और हमारे धर्म एवं संस्कृति में वेदशास्त्र की ही परमसत्ता स्वीकार की गयी है। इसीलिये इस प्रकार के शास्त्र विरोधी मतों का खंडन कर वेद शास्त्रों के परम प्रामाण्य की स्थापना द्वारा पूज्य स्वामी जी ने आद्य जगद्गुरु भगवान शंकराचार्य की भाँति महान कार्य किया है। बिना शास्त्र प्रामाण्य स्वीकार किये हमारा न इस लोक में भला हो सकता है और न परलोक में। शास्त्र में विश्वास न रखने वाले पर तो 'इतः भ्रष्टः ततः भ्रष्ट' की उक्ति चरितार्थ होती है। पूज्य धर्म सम्राट की लौह लेखनी से यह सारा विवेचन पढ़ने पर आज की खोखली, निस्सार एवं निराधार विचारधारा का भंडाफोड़ हो जाता है। श्री गोलवलकर जी की पुस्तकों विचार दर्शन तथा हमारी राष्ट्रीयता में व्यक्त विचारों पर गहन गम्भीर विवेचना की है। 'राष्ट्रीयता की कसौटी', 'संस्कृति का अर्थ और वर्ण व्यवस्था', 'जाति और हिन्दुत्व : शास्त्रीय दृष्टि में,' 'तीन राष्ट्रीय स्वतन्त्रताएं,' वैयक्तिक सम्पत्ति और आर्थिक सन्तुलन,' 'धर्मसापेक्ष पक्षपात विहीन राज्य,' मार्क्सवाद और स्वेतलाना,' 'भारत में जनतन्त्र' और 'कौटिल्य और अध्यात्म' ये सभी ऐसे विषय हैं जिन पर आज लोग मनमाने ढँग से चर्चा कर अपना तथा दूसरों का समय नष्ट करते रहते हैं,

परन्तु पूज्य श्री ने उपर्युक्त सभी विषयों पर शास्त्र समस्त ढंग से विचार प्रस्तुत कर अन्धकार में भटके हुये बुद्धिजीवियों को सही राह दिखायी है। एक बार पढ़ने से सारा अज्ञान-अन्धकार नष्ट हो जाता है और आधुनिक वादों के स्थान पर शास्त्र प्रामाण्यवाद की उपादेयता का अनुभव होने लगता है।

वर्तमान युग में सुधारवाद का इतना बोलबाला है कि सनातन धर्म की परम्पराओं, मान्यताओं एवं सिद्धान्तों को सबसे अधिक आलोचना का विषय बनना पड़ता है। तथाकथित हिन्दू नेता भी सबसे अधिक वर्णाश्रम धर्म आदि की निन्दा करते हुयें गौरव का अनुभव करते हैं। अतः ग्रंथ के तृतीय भाग में 'सुधारक हिन्दू और शास्त्रीय सनातन धर्म' के अन्तर्गत प्रसिद्ध हिन्दू नेता वि० दा० सावरकर के 'भारतीय इतिहास के छः स्वर्णिम पृष्ठ' ग्रंथ की तथ्यपूर्ण समीक्षा की गयी है। पूज्य स्वामी जी को कभी किसी से राग द्वेष नहीं रहा है। विपक्षी के सर्वथा युक्ति युक्त एवं शास्त्र सम्मत मत का उन्होंने सदा आदर किया है। किन्तु पाश्चात्य विचारधारा से प्रभावित होकर, नास्तिकता के पचड़े में पड़कर या शास्त्र विरुद्ध हिन्दुत्व की आड़ लेकर यदि किसी भी नेता ने कुछ कहने अथवा लिखने का साहस किया तो उसका मुंह तोड़ उत्तर देने में पूज्य स्वामी जी कभी पीछे नहीं रहे। वस्तुतः स्वामी जी के इस प्रयास से सावरकर जी के उपर्युक्त ग्रंथ के शास्त्रीय दृष्टि से खटकने वाले अंगों का निराकरण हो जाने से उसकी उपादेयता ही बढ़ी है। शास्त्र सम्मत सिद्धान्त का दृढ़ता के साथ प्रतिपादन एवं मंडन करने में पूज्य स्वामी जी जैसा विद्वान आज दूसरा दृष्टिगोचर नहीं होता है। उनके इस प्रयास के लिये हिन्दू जाति सदा उनकी ऋणी रहेगी।

इस प्रकार स्पष्ट है कि 'विचार पीयूष' पूज्य स्वामी जी का ऐसा अनमोल ग्रंथ है जिसमें विशुद्ध भारतीय वैदिक विद्या-समुद्र से अद्भुत रत्नों का संग्रह हुआ है। उन्होंने अपने तप, त्याग, वैराग्य, ज्ञान एवं भक्ति से मथित पीयूषकणों को चुन-चुनकर इस ग्रंथरत्न में संजोया है। आज के इस भयंकर झंझावात में उत्पीड़ित मानव समाज में जिस किसी को इसके पान करने का सौभाग्य प्राप्त होगा वह उत्पीड़न से मुक्त होकर शाश्वत शान्ति का उपभोग करेगा। इस असीम अनुग्रह के लिये विचारक जगत अनन्त श्री स्वामी जी का आभारी रहेगा। वस्तुतः यह महाग्रंथ हिन्दू समाज-दर्शन के जिज्ञासुओं के लिये ईश्वरीय वरदान होने से संग्रहणीय एवं पठनीय है। ●●

**भक्ति सुधा**

भक्त सन्तों की अपने देश में महान् परम्परा रही है। काशी में श्रीधर स्वामी, मधु सूदन सरस्वती और नारायण तीर्थ आदि ने इस परम्परा के मुकुट मणि के रूप में भक्ति सम्बन्धी अनेक महान् ग्रन्थों का प्रणयन किया। स्वामी करपात्री जी महाराज काशी की इसी भक्ति-मार्गी संन्यासी परम्परा के अलंकार हैं। उन्होंने संस्कृत में 'भक्ति रसार्णव' ग्रन्थ की रचना कर भक्ति रस के स्वरूप का विवेचन गम्भीर शास्त्रीय पद्धति से किया है। आज तक भक्ति को स्वतन्त्र रस न मानकर भाव ही माना जाता रहा किन्तु अद्वैत वेदान्त के मूर्धन्य विद्वान् होते हुये पूज्य स्वामी जी का भक्ति को स्वतन्त्र रस की मान्यता से सुशोभित कराना उनके महान् भक्त हृदय का परिचायक है। भक्ति के

समस्त अंगों-उपांगों, क्षेत्रों तथा विधाओं की मीमांसा उनके इस ग्रंथ में मिलती है। पूज्य स्वामी जी का प्रस्तुत ग्रंथ 'भक्ति सुधा' इसी 'भक्ति रसार्णव' का अनुपूरक ग्रन्थ है। 'भक्ति रसार्णव' भक्ति का सिद्धान्त-दर्शन प्रस्तुत करता है, तो 'भक्ति सुधा' भक्ति के व्यवहार-दर्शन की विवेचना करती है। वस्तुतः भक्ति के क्षेत्र में महाराज श्री की अन्यतम स्थिति का इस ग्रंथ में पदे-पदे परिचय मिलता है!

वेद-उपनिषद्, रामायण, महाभारत, गीता, पुराण, तन्त्र तथा मन्वादि धर्मशास्त्रों में भक्ति का बड़े समारोह पूर्वक प्रतिपादन हुआ है। ज्ञान, कर्म और भक्ति की त्रिवेणी से भारतीय साहित्य की पावनता की श्री वृद्धि में सन्तों का महत्वपूर्ण योगदान रहा है। 'भक्ति-सुधा' में स्वामी जी का यही प्रयास दृष्टि गोचर होता है। गणेश, शिव, पार्वती (दुर्गा), विष्णु तथा सूर्य इन पाँच देवताओं की पूजा का विधान सनातन धर्म के ग्रंथों में मिलता है। भगवान् शंकाचार्य ने पंचमत की स्थापना कर सगुण-साकार उपासना के अन्तर्गत उपर्युक्त पंचदेव उपासना का प्रचार किया था। निर्गुण निराकार उपासना के लिये पर-ब्रह्मपरमेश्वर का स्वरूप उन्होंने हमारे सामने रखा। महाराज श्री ने इन समस्त वैदिक उपासनाओं का शास्त्र सम्मत ढंग से इतना सुन्दर वर्णन किया है कि उनके प्रतिपादन में भक्ति भाव स्वयं मुखरित होकर सम्बन्धित देवताओं की उपासना में संलग्न दिखाई पड़ता है। 'श्री शिव तत्त्व' (४२ पृष्ठ), 'श्री विष्णु तत्त्व' (७४ पृष्ठ), 'श्री भगवती तत्त्व' (८६ पृष्ठ), 'गणपति तत्त्व' (१६२ पृष्ठ) तथा गायत्री तत्त्व (८६ पृष्ठ) में वर्णित भक्ति भाव अत्यन्त मर्मस्पर्शी बन पड़े हैं। 'माँ के चरणों में' (१५६ पृष्ठ) में वर्णित उनका आत्म-निवेदन भक्ति की पराकाष्ठा का परिचायक है। 'नामरूप की उपयोगिता (३ पृष्ठ), 'इष्ट देव की उपासना' (८ पृष्ठ), 'मानसी आराधना' (१६ पृष्ठ), पंचगुणोपासना में सरलता' (२३ पृष्ठ), 'गजेन्द्र-मुक्ति' (१४६), 'शिवलिङ्गोपासना-रहस्य' (५४ पृष्ठ) तथा 'बुद्धावतार का प्रयोजन' (१४५ पृष्ठ), ऐसे गूढ़ दार्शनिक एवं आध्यात्मिक विषय हैं जिनको बोधगम्य बनाना पूज्य स्वामी जी सदृश महापुरुषों के लिये ही सहज कार्य है। उन्होंने 'निराकार से साकार' (२०८ पृष्ठ), अवतार मीमांसा (२०१ पृष्ठ), और भगवदवतार का प्रयोजन (२२३ पृष्ठ तथा 'भारत ही में अवतार क्यों?' (२२८ पृष्ठ) जैसे विषयों के विवेचन में इनके सम्बन्ध में उठने वाली समस्त शकाओं का युक्ति-युक्त समाधान किया है। 'ज्ञान और भक्ति', 'भक्ति रसामृतास्वादन' (२६३), 'अव्यभिचार भक्तियोग' (२८२ पृष्ठ), 'भगवत् प्राप्ति' 'सबसे सगे भगवान्' (२८८), 'भगवच्छरणागति से ही गति' (२६५ पृष्ठ) और 'भगवान् का अवलम्बन अनिवार्य' (२६८ पृष्ठ) में स्वामी जी की लेखनी का चमत्कार देखते ही बनता है और बड़े से बड़े तार्किक को भी उनके सम्मुख श्रद्धावनत होना पड़ता है।

'प्रेम तत्त्व' (३०० पृष्ठ), 'भगवान और प्रेम', 'भगवत्कथामृत' (३१२ पृष्ठ) और 'प्रभु-कृपा' (३१७ पृष्ठ) में भक्ति तत्त्व की मार्मिक मीमांसा की गयी है। 'श्री रामजन्म रहस्य' (३३० पृष्ठ), 'श्री कृष्ण जन्म (३४० पृष्ठ), भगवान् का मंगलमय स्वरूप (३४५ पृष्ठ), और श्रीकृष्ण बाल क्रीड़ा (३७६ पृष्ठ) के विवेचनों को पढ़कर पाठक का मन आह्लादित हो उठता है। ग्रंथ का अन्तिम भाग तो भक्त हृदय का सारसर्वस्व है। पूज्य स्वामी जी भक्ति की साक्षात् मूर्ति थे। उनके 'वेणुरव'

(४१३ पृष्ठ), 'वेणुगीत' (५२६ पृष्ठ), 'चीर हरण' (५६१ पृष्ठ), 'व्रज भूमि' (६१७ पृष्ठ), 'श्री रास-लीला रहस्य' (६३३ पृष्ठ), और 'श्री रास पंचाध्यायी' (८६१ पृष्ठ), ये लेख इतने सरस एवं भक्ति समन्वित बन पड़े हैं कि इनको पढ़ते-पढ़ते भावुक हृदय भक्ति रस में डूब जाता है। यहाँ यह कहना अनुचित नहीं होगा कि पूज्य स्वामी जी ने श्रीमद्भागवत वर्णित रासलीला के महत्व को पुनः प्रतिष्ठित कर सनातन धर्म का बड़ा उपकार किया है, अन्यथा, महाराज श्री के इस क्षेत्र में पदार्पण से पहले पं० मदनमोहन मालवीय जैसे सनातनो विद्वान् भी श्रीमद्भागवत महापुराण से रासलीला के प्रकरण को बहिष्कृत करने के पक्षधर बन गये थे। पूज्य स्वामी जी ने शास्त्रार्थ में ही ऐसे लोगों को निरुत्तर कर 'श्री रासपंचाध्यायी' को भागवत के पंच प्राण के रूप में प्रतिष्ठित किया। महाराज श्री भागवत के अद्भुत व्याख्याता एवं भगवती राधारानी के परम उपासकों में थे। इन हृदयहारी प्रसंगों पर उनका विवेचन कितना सजीव एवं सरस बन पड़ा है? यह तो भक्ति सुधा में अवगाहन करने से ही पता चलेगा। 'वेदान्त रससार' और 'सर्वसिद्धान्त समन्वय' (६२५ पृष्ठ), इन दो प्रसंगों में पूज्य श्री का वेदान्त और भक्ति से सम्बन्धित दृष्टिकोण दर्शनीय है। भक्ति और वेदान्त की एकता का प्रतिपादन वस्तुतः उन्हीं के महान् व्यक्तित्व का कृपाफल है। यह भाव आद्य श्री शंकराचार्य जी के साहित्य में भी परिलक्षित होता है।

संकल्प बल के सम्बन्ध में दो उद्धरण पाठकों के ज्ञानवर्धन हेतु उद्धृत हैं।

"जिस समय बुरे विचार आने लगें, उस समय अन्यमनस्क होने का प्रयत्न करें। भगवद् ध्यान से, मन्त्र जप से, श्रवण से, सत्संग से बुरे विचारों की धारा तोड़ देनी चाहिये। भले ही उपन्यास, नाटकों, समाचार पत्रों को पढ़ना पड़े, परन्तु बुरे विचारों की धारा अवश्य तोड़नी चाहिए। इसी तरह अच्छे कर्मों के लिए पहले अच्छे विचारों को लाना चाहिये। इसीलिये अच्छे शास्त्रों का अभ्यास, अच्छे पुरुषों का संग करने और पवित्र वातावरण में रहने से अच्छे विचार बनते हैं, बुरे विचार और बुरे कर्म दूर होते हैं।" पृष्ठ ३३ पर कहा है - तात्पर्य यह है कि प्राणी के पास संकल्प नाम की एक ऐसी चीज है कि उसे कामधेनु, चिन्तामणि या कल्पतरु कुछ भी कह सकते हैं। बुरे कर्मों को छोड़कर, अच्छे कर्मों, आराधनाओं, तपस्याओं में लगे रहने पर संकल्प या विचार की शक्ति मज-बूत हो जाती है। पौर्वापर्य्यानुसंधान शून्य दृढ़ संकल्प में प्राणी सब कुछ प्राप्त कर सकता है। जैसे वायु के योग से जल ही तरंग बन जाता है, उसी तरह मन की शक्ति के योग से अखण्ड बोध-स्वरूप परमात्मा ही विचार या संकल्प बन जाता है।

स आत्मा सर्वगो राम नित्योदितवपुर्महान्।
स मनाङ्मयीं शक्तिं धत्ते तन्मन उच्यते।।

ज्ञान और भक्ति के प्रकरण में पृष्ठ २३६ पर कहा है--

इन दोनों पक्षों पर विचार करने से पहले यह समझ लेना चाहिये कि भक्ति पद का प्रयोग कहाँ होता है। वैदिकों की दृष्टि में कर्म, उपासना और ज्ञान यह तीन साधन प्राणियों के कल्याण के मूल हैं। कर्म से मल की निवृत्ति, उपासना से विक्षेप की निवृत्ति और ज्ञान से आवरण की निवृत्ति

होती है। मल विक्षेप आवरण इन तीन उपद्रवों से उपद्रुत होकर अन्तरात्मा अनन्त अनर्थों का भागी होता है।

इन तीनों साधनों से तीनों उपद्रवों के निवृत्त हो जाने पर अन्तरात्मा की शुद्ध प्रत्यक् चैतन्याभिन्न परब्रह्मस्वरूप से अवस्थिति होती है। इस पक्ष से देहेन्द्रिय, मन, बुद्धि, चित्त और अहंकार की, संध्या, तर्पण, वैश्वदेव, अग्निहोत्र, दर्श पौर्णमास, चातुर्मास्यादि श्रौत-स्मार्त कर्म लक्षण चेष्टाएँ ही कर्म हैं। सगुण, साकार, सच्चिदानन्दघन परब्रह्माकाराकारित स्निग्ध अन्तःकरण वृत्ति परम्परा ही उपासना या भक्ति है। साथ ही सगुण, निराकार परब्रह्माकाराकारित अन्तःकरण वृत्ति-परम्परा एवं निर्गुण, निराकार ब्रह्माकार वृत्ति को भी उपासना या भक्ति कहा जाता है। कुछ लोग कहते हैं कि निर्गुण, निराकार, ब्रह्माकार वृत्ति को ज्ञान कहते हैं और सगुण ब्रह्माकार स्नेहालिका वृत्ति को भक्ति कहते हैं।

वस्तुतः ब्रह्माकार वृत्ति परम्परा को कर्म और ज्ञान दोनों ही कहा जा सकता है, परन्तु सारांश यही है कि प्रमाण एवं वस्तु के परतन्त्र वृत्ति ज्ञान है और पुरुषतन्त्र मानसी वृत्ति कर्म है। वही श्रद्धा-स्नेह सहकृता उपासना या भक्ति है। ज्ञान में प्राणी परतन्त्र होता है, घ्राण से गन्ध का सन्निकर्ष होने पर इच्छा न होते हुये भी गन्ध ज्ञान होता है। अतः ज्ञान में पुरुष को स्वतन्त्रता नहीं है परन्तु ध्यान या उपासना में प्राणो स्वतन्त्र होता है।"

इन उदाहरणों से आप जान गये होंगे कि गूढ़ विषयों का निरूपण कितने सरल शब्दों में किया है। आगे चलकर एक स्थान पर महाराज श्री ने लिखा है कि 'भक्ति माँ के ही ज्ञान और वैराग्य पुत्र हैं।' जिसका प्रयोजन मैं समझता हूँ कि भक्त के मन में ज्ञान और वैराग्यपूर्ण रूप से उदित रहते हैं।

## मार्क्सवाद और रामराज्य

स्वामो करपात्रो जी केवल धर्मशास्त्रों का ज्ञान रखने वाले संन्यासी ही नहीं थे बल्कि राजनीति का ज्ञान भी उनका अतुलनीय था। समस्त भारतीय एवं पाश्चात्य राजदर्शन उन्हें हस्तामलकवत् सिद्ध थे। संवत् २०१४ में प्रथमवार गीताप्रेस गोरखपुर से प्रकाशित 'मार्क्सवाद और रामराज्य' पूज्य महाराज श्री का राजनीति पर लिखा हुआ अनूठा महाग्रंथ है। आधुनिक युग में मार्क्सवाद का इतना बोलबाला है कि राजनीति में इस विचारधारा का विरोध करना लोहे के चने चबाना है। आज समाजवाद (साम्यवाद) धर्म निरपेक्षतावाद तथा प्राचीन आदर्शों का नकारना प्रगति का सूचक बन गया है। धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष पुरुषार्थ चतुष्टय का भारतीय सिद्धान्त भुलाकर आज के राजनेता पाश्चात्य सिद्धान्तों का अन्धानुकरण करने पर लगे हुये हैं। भारतीय राजदर्शन की निरन्तर अवहेलना देखकर पूज्य स्वामी जी ने यह महाग्रंथ लिखा। इसमें समस्त भारतीय तथा पाश्चात्य राजदर्शनों की युक्तियुक्त तुलना की गयी है। युग पुरुष गाँधी जी 'रामराज्य' के प्रशंसक थे। वह स्वराज्य मिल जाने

पर देश की राजनीति को आदर्शवाद पर आधारित करना चाहते थे किन्तु उनकी रामराज्य की कल्पना कभी स्पष्ट नही हो पायी। पूज्य स्वामी जी ने इस महाग्रंथ में मार्क्सवाद तथा समस्त पाश्चात्य राजदर्शन का खंडन कर उसके विकल्प में वेद शास्त्रों पर आधारित 'रामराज्य' की स्थापना बड़े युक्तियुक्त ढंग से की है। उनके अनुसार समस्त भारतीय राजनीति का समावेश एक 'रामराज्य' शब्द में हो जाता है। और यह धर्मसापेक्ष पक्षपात विहोन राज्य का सूचक है। धार्मिक, आध्यात्मिक सांस्कृतिक, राजनैतिक, आर्थिक, सामाजिक तथा दार्शनिक आदि सभी दृष्टिकोणों से 'रामराज्य' की धारणा को इस महाग्रंथ में स्पष्ट किया गया है। १४ सितम्बर, १९५८ के नवभारत टाइम्स (दिल्ली, बम्बई) की इस ग्रंथ रत्न के सम्बन्ध में टिप्पणी यहाँ उल्लेखनीय है—'भौतिकवाद की प्रचंड आँधी ने समस्त संसार की चिन्तन धारा को झकझोर दिया है। आज संसार की लगभग आधी आबादी मार्क्सवाद से प्रेरणा लेकर अपने-अपने ढंग पर आर्थिक उन्नयन के लिये प्रयत्नशील है। भारत भी इस हवा से अछूता नहीं है। पर यहाँ की दार्शनिक एवं सांस्कृतिक परम्पराओं को लांघकर कोई भी वाद इस देश में पनप नहीं सकता। ऐसा क्यों नहीं होगा और क्यों नहीं होना चाहिये, इसी वस्तु को स्पष्ट करने के लिये स्वामी श्री करपात्री जी की यह रचना है। प्रस्तुत ग्रंथ में न केवल भाव बल्कि समस्त पश्चिमी राजनीति शास्त्रों का गम्भीर विश्लेषण द्वारा खंडन किया है। वस्तुतः यह एक अनुपम ग्रंथ है।'' इस ग्रंथ के प्रकाशन के पच्चीस वर्ष व्यतीत हो जाने पर भी इसके विरोध में किसी कम्युनिष्ट लेखक का कुछ न लिख पाना इस ग्रंथ के महत्त्व को और भी बढ़ा देता है।

मार्क्स के कथनानुसार किसी वस्तु का विनिमय मूल्य का आधार उसमें लगने वाला श्रम है। अत: श्रम की सर्वोपरि महत्ता है। बल्कि ''श्रमजीवी हो जो कच्चे माल से वस्तुएँ तैयार करते तथा कच्चा माल उत्पन्न करके वस्तु-निर्माण के स्थान तक पहुँचाते हैं, मूल्य के एकमात्र उत्पादक हैं।'' इस तर्क का महाराज श्री ने किस प्रकार मूलोच्छेद किया है—श्रम की बराबरी के अनुसार दाम की बराबरी की बात सर्वथा असंगत एवं अव्यावहारिक है। सीसम व चन्दन के सिंहासन बनाने में श्रम समान ही होगा पर दोनों के मूल्य में पर्याप्त अन्तर होता है। लोहे की थाली एवं सोने की थाली में श्रम के विपरीत मूल्य मिलने का व्यवहार आज भी प्रचलित है। पहाड़ से निकले हुये अपरिष्कृत हीरे में कुछ भी श्रम नहीं लगा, किन्तु लाखों गज कपड़े के बनाने में अपेक्षित महान् श्रम भी उसके बराबर का नहीं ठहरता। अत: कहना पड़ेगा कि उपयोग तथा माँग के अनुसार ही वस्तु का मूल्य होता है। यह बात श्रम एवं श्रम निर्मित पदार्थ दोनों ही के सम्बन्ध में समान रूप से लागू होती है। जल वायु अत्यन्त उपयोगी होते हुये भी जहाँ पर्याप्त मात्रा में सुलभ होते हैं वहाँ उनका कोई दाम नहीं है पर जहाँ कमी होने के कारण उनकी माँग होती है वहाँ उनका भी दाम बढ़ जाता है। यदि हीरा भी पानी या बालू के तुल्य पर्याप्त होता और उसकी माँग न होती तो इतने मूल्य का वह न होता। अथवा यदि वह शौकीन धनिकों की मानसिक आवश्यकता का पूरक न होता तो भी उसकी कीमत नगण्य ही होती।''

(पृष्ठ ३२०— गीता प्रेस संस्करण सं० २०१४)

यह ठीक है श्रम बिना कच्चा माल तथा मशीनें व्यर्थ हैं, पर श्रम भी प्राकृतिक साधनों

(कच्चे माल) के अभाव में निरर्थक ही है। अतएव श्रम को केवल सहकारी कारण माना जा सकता है। ..............प्राकृतिक साधन तो श्रमानपेक्ष भी कुछ मूल्य रखते हैं, पर अन्य साधनों के अभाव में श्रम की कोई कीमत नहीं।"

(वही पृष्ठ ३२२)

लेनिन के शब्दों में "गन्दी नाली के जल से प्यास बुझाना ठीक नहीं, किन्तु जैसे स्वास्थ्यकर तृप्तिकर जल से ही प्यास बुझाना उचित है वैसे ही तृप्ति कर, स्वास्थ्यवर्द्धक स्त्री-पुरुष सम्बन्ध में कोई भी हानि नहीं है।" इस उच्छृंखल मत का खण्डन कितने सुन्दर ढंग से किया है –

धर्म बुद्धि से शिष्य जैसे स्वेच्छापूर्वक गुरु का अनुसरण (दास्य) करने में लज्जित नहीं होता, पुत्र जैसे माता पिता का दास्य करने में नहीं हिचकता, वैसे ही स्त्री भी अपने पति एवं सास-ससुर का दास्य या सेवन एवं अनुसरण करने में लज्जित नहीं होती। ...... औद्योगिक समृद्धि के युग में भी सन्नारियों के शील स्वभाव में कोई अन्तर नहीं पड़ा। ......पुरुष की अपेक्षा भी नारी-जाति श्रद्धालु है। वह अपने पति से भिन्न पुरुष को भ्राता, पिता, पुत्र की दृष्टि से देखना उचित समझती है, धर्महीन मनमाने यौन सम्बन्ध को वह पाप ही समझती है।

वेदों की नीति में तो मुख्य विशेषता ही यह थी कि देश में कोई स्वैरी पुरुष नहीं होता था, फिर स्वैरिणी स्त्री का तो होना सम्भव ही कैसे था। 'न स्वैरी स्वैरिणी कुतः' (छान्दो० ५/११/५) स्त्री सर्वदा ही लज्जाशील होती है, वह कभी भी अभियोक्त्री नहीं होती। वेश्या भी अभियुक्ता होने में ही सुख का अनुभव करती है। ......

इसी प्रकार मार्क्सवाद की अन्यान्य मान्यताओं को अपने तर्क व प्रमाणों से ध्वान्त किया है। दर्शन एवं राजनीति के अध्येताओं के लिये यह ग्रन्थ रत्न बड़ा उपादेय है।

## वेद का स्वरूप और प्रामाण्य (दो भाग)

—प्रकाशक श्री धर्मसंघ शिक्षा-मंडल दुर्गाकुण्ड, वाराणसी। पृ० सं० ७१४, मू० ७'५०

परम पूज्य धर्मसम्राट् अनन्त श्री स्वामी करपात्री महाराज का इस ग्रन्थ के रूप में कृपा-प्रसाद वैदिक विद्वानों के लिये वरदान रूप है। दीर्घकाल से वेदों के सम्बन्ध में अनेक प्रकार के भ्रामक विचारों को फैलाने का षड्यन्त्र चला हुआ देखकर पूज्य श्री चरणों ने इस ग्रथ रत्न में वेद सम्बन्धी आज तक की तथा भविष्य में उठने वाली शंकाओं का समस्त वैदिक वाङ्मय, युक्तियों तथा अपनी सर्वतन्त्र स्वतन्त्र प्रतिभा के द्वारा जितना सुन्दर एवं सारगर्भित समाधान किया है वैसा अन्य किसी विद्वान् द्वारा सम्भव नहीं है। वस्तुतः वेद भारतीयों के लिये ऐसा अपौरुषेय निर्देश है जिसका पालन करके हम अपनी जीवन यात्रा को सदा से सफल करते रहे हैं। वेद ही हमारे सारे धार्मिक कृत्यों का मूल है।

एक लम्बे समय से वेद पर विभिन्न व्याख्याओं द्वारा पक्ष-विपक्ष पूर्वक विचार होता चला आ रहा है। यास्क तथा उससे भी पूर्व के वेद-व्याख्याकारों का उल्लेख हमें निरुक्त में मिलता है। वेंकट माधव, स्कन्द-स्वामी, आचार्य सायण, उव्वट तथा महीधर आदि भाष्यकारों की कृपा से वेद की परम्परागत तथा शास्त्र सम्मत व्याख्या का प्राप्त होना हमारे लिये सौभाग्य की बात है। ये भाष्य-कार ही वेदार्थ को समझने में हमारे लिये अन्धे की लकड़ी के समान हैं। पश्चिमी भौतिकवादी सभ्यता

के चहुँ ओर प्रसार होने से पूर्व इन्हीं भाष्यकारों की व्याख्याओं को मान्यता प्राप्त थी किन्तु विगत १००-१५० वर्षों में पश्चिमी तथा तदनुयायी भारतीय विद्वानों ने जो विभिन्न प्रकार की व्याख्याएं की हैं उनमें आर्यसमाजी व्याख्या तथा भाषा वैज्ञानिक दृष्टि वाली पाश्चात्य व्याख्या की आजकल अधिक चर्चा होने से श्रौतस्मार्त मान्यता पर आधारित सायणमार्गी आस्तिक व्याख्या से जनसामान्य का ध्यान हटने की आशंका से प्रेरित होकर पूज्य श्री चरणों ने इस महान् ग्रंथ की रचना की है। प्रस्तुत ग्रंथ में वेद के स्वरूप तथा उसके प्रामाण्य पर विचार करते हुये सभी मतों की निष्पक्ष एवं युक्तियुक्त मीमांसा की गई है।

ग्रंथ के प्रथम भाग में वेदों की अपौरुषेयता, उनका स्वतः प्रामाण्य, समस्त वेद का प्रामाण्य, विध्यर्थ भावना विचार और अर्थवादों का प्रामाण्य इन पाँच प्रकरणों में सम्बन्धित सभी पूर्व पक्षों का समाधान करते हुये मीमांसा शास्त्र के सिद्धान्तों का बड़े विस्तार से विवेचन किया गया है। द्वितीय भाग में मंत्र-प्रामाण्य विचार, वेद की शाखाओं का शास्त्रीय विवेक, ब्राह्मण भाग का वेदत्व-विचार और ब्राह्मण भाग के वेदत्व पर विशिष्ट विचार इन चार प्रकरणों में अनेक वेद सम्बन्धी मतों की समीक्षा करते हुये स्वामी दयानन्द के ब्राह्मण भाग को वेद न मानने के दृष्टिकोण का युक्तियुक्त खंडन किया गया है। वेदार्थ विचार के जिज्ञासुजनों के लिये वस्तुतः यह ग्रंथ कल्पतरु है। इसमें उन्हें वेद, वेदांत, मन्वादि धर्मशास्त्र, षड्दर्शन, तथा महाभारत-रामायण आदि इतिहास-पुराण पर आधारित सिद्धान्तों का एक साथ संकलन मिल जायेगा। पूज्य महाराज श्री के अन्तिम कृपाप्रसाद 'वेदार्थ-पारिजात के ज्ञानसागर में जो पूर्णरूप से अवगाहन करना चाहते हैं उनके लिये तो यह ग्रंथ अत्यन्त उपयोगी सिद्ध होगा। अतः यह ग्रंथ सभी के पठनीय है।

## संघर्ष और शान्ति

—सम्पादक एवं प्रकाशक श्री सन्त शरण वेदान्ती धर्मसंघ, दुर्गाकुण्ड, वाराणसी।
पृ० सं० २५५, मू० ४'००

परम पूज्य धर्मसम्राट् अनन्त श्री स्वामी करपात्री जी महाराज द्वारा लिखित विद्वत्तापूर्ण लेख तथा उनके द्वारा दिये हुये सारगर्भित व्याख्यानों से सनातनधर्मी जनता भली भाँति परिचित है। इस पुस्तक में उनके द्वारा लिखे हुये विभिन्न विषयों पर सत्ताईस लेखों का संग्रह बड़ा सुन्दर बन पड़ा है। उनके अनेक ग्रंथ ऐसे हैं जिन्हें जनसामान्य के लिये समझना कठिन है किन्तु यह ऐसा ग्रंथ है जिसमें विषय, भाव तथा भाषा की योजना पूज्य स्वामी जी ने जनसामान्य को दृष्टि में रखकर की हुई जान पड़ती है। हिन्दी ग्रंथों में ज्ञान, वैराग्य, भक्ति, कर्म तथा अन्य शास्त्रीय सिद्धान्तों का इतना सुस्पष्ट विवेचन मिलना अन्यत्र दुर्लभ है।

जन कल्याण को दृष्टि में रखते हुये वेद शास्त्रों के गहन तत्वों का प्रतिपादन कर उन्हें सभी के लिये सुग्राह्य बनाने की स्वामी जी की विशेषता का इस पुस्तक में पदे-पदे दर्शन होता है। विभिन्न

विषयों पर लिखे गये इन सत्ताईस लेखों में पढ़ते समय पाठक को यह चुनाव करना कठिन हो जाता है कि वह कौन से लेख को पढ़ें और किस लेख को छोड़ें। अतः लोक कल्याण की भावना से लिखी हुयी यह पुस्तक सभी के लिये उपयोगी सिद्ध होगी ऐसा हमारा विश्वास है।

## पूँजीवाद समाजवाद और रामराज्य

—-प्रकाशक श्री सन्तशरण वेदान्ती दुर्गाकुण्ड, वाराणसी। पृ० सं० २६७, मू० ५ ००

भौतिक, पूँजीवाद और समाजवाद के वास्तविक स्वरूप के समझे बिना ही आजकल इन वादों के सम्बन्ध में भाँति-भाँति की चर्चा जहाँ-तहाँ सुनने को मिलती है। श्री रजनीश जैसे तथाकथित विचारक भी इन वादों पर पुस्तकें लिखकर जनता को भ्रमित कर रहे हैं। ऐसे विचारक स्वयं भी गुमराह होते हैं और दूसरों को भी गुमराह करते हैं। अतः ऐसे विचारकों की युक्तियों का खंडन राष्ट्र हित की दृष्टि से अत्यन्त महत्त्वपूर्ण समझकर परम पूज्य धर्मसम्राट् श्री स्वामी करपात्री जी महाराज ने न केवल राष्ट्र का बल्कि सम्पूर्ण वैचारिक जगत् का महान् उपकार किया है। स्वामी जी का यह प्रयास ही 'पूँजीवाद, समाजवाद और रामराज्य' पुस्तक के रूप में उनको राजनैतिक प्रतिभा को उजागर कर रहा है। इस पुस्तक के देखने से पता चलता है कि पूज्य स्वामी जी केवल संन्यासी या धर्म विचारक ही नहीं वरन् उच्चकोटि के राजनैतिक विद्वान् भी थे।

श्री रजनीश ने अपनी 'समाजवाद से सावधान' पुस्तक में समाजवाद को भौतिक पूँजीवाद का विकसित रूप मानकर एक कपोल कल्पित कहानी से पुस्तक का आरम्भ करते हुये समाजवाद को एक कोरी कल्पनामात्र सिद्ध करने का प्रयास किया है। उनकी पुस्तक का उद्देश्य पूँजीवाद का समर्थन करना प्रतीत होता है। वह भौतिक समाजवाद की अपेक्षा भौतिक, पूँजीवाद को श्रेष्ठ मानते हैं। स्वामी जी ने सिद्ध किया है कि लोकतंत्र का सच्चा विकास न तो भौतिक, पूँजीवाद में और न भौतिक समाजवाद में ही सम्भव है। इसके लिये तो अध्यात्मवाद पर आधारित धर्मनियन्त्रित पक्षपात विहीन रामराज्य ही उपयुक्त है। धर्म विरोधी आधुनिक वादों से मानव समाज को मुक्ति प्रदान करने और धर्म सापेक्ष राजदर्शन को समझने के लिये यह पुस्तक सभी के लिये पठनीय है।

## "विदेश यात्रा" : शास्त्रीय पक्ष

— प्रकाशक श्री सन्तशरण वेदान्ती दुर्गाकुण्ड वाराणसी। पृ० सं० ११७, मू० २.००

यद्यपि वर्तमान युग में आर्थिक दृष्टिकोण की प्रधानता के कारण विदेश यात्रा को गौरव, आर्थिक लाभ तथा प्रतिष्ठा का केन्द्रीय बिन्दु समझा जाता है। आज के युग में विदेश यात्रा की अशास्त्रीयता तथा धर्म-विरुद्धता बताकर उसका निषेध करने वाला बिरला ही हो सकता है। वस्तुतः हमारी सम्पूर्ण आचार परम्परा का एकमेव आधार अनादि अपौरुषेय वेद तथा तदनुकूल व्यवस्था देने वाले शास्त्र ही हैं। उन्हीं शास्त्रों का आश्रय लेकर लिखी गयी इस पुस्तक में महाराज श्री ने शास्त्रीय तथ्य से अवगत कराते हुये विदेश यात्रा की अशास्त्रीयता एवं धर्म विरुद्धता पर बड़े सुन्दर ढंग से प्रकाश डाला है।

यद्यपि आजकल अनेक सनातनी विद्वान् साधु एवं आचार्य भी विदेश यात्रा का न केवल समर्थन ही कर रहे हैं वरन् धर्म प्रचार की आड़ लेकर स्वयं विदेशों में घूम रहे हैं तथापि भले ही उनका विदेश जाना या विदेश यात्रा का समर्थन करना विश्व हित की भावना से ही हो तथापि इसका मूल कारण उनकी वासना ही मानी जायेगी और उनकी वासना के आधार पर न शास्त्रीय व्यवस्था को बदला जा सकता है और न ऐसी अशास्त्रीय व्यवस्थाओं से विश्व का वास्तविक हित ही हो सकता है। इस दृष्टि से पूज्य स्वामी जी ने परम अनुग्रह कर इस पुस्तक में विदेश यात्रा के सम्बन्ध में निष्पक्ष रूप से जो शास्त्रीय पक्ष प्रस्तुत किया है वह उनकी अनन्य शास्त्रीय निष्ठा का तो प्रतीक है ही साथ ही उससे यह भी संकेत मिलता है कि वेद शास्त्रों द्वारा प्रतिपादित सिद्धान्तों के अनुसार आचरण में शैथिल्य या अन्यथा भाव अपनाना भारी बिडम्बना ही है। जो लोग यह जानने को उत्सुक हैं कि वेद शास्त्रों में विदेश यात्रा का क्यों निषेध किया गया है? उन्हें इस पुस्तक को अवश्य पढ़ना चाहिये। पचास शीर्षकों में लिखा हुआ यह एक विस्तृत लेख धर्मसम्राट् की लौह लेखनी के चमत्कार का परिचायक है।

**श्रीविद्या वरिस्या**

—प्रकाशक अखिल भारतीय धर्मसंघ वाराणसी। पृ० २६४, मू० ८·००

परम पूज्य धर्मसम्राट् श्री स्वामी करपात्री जी महाराज श्री विद्या उपासना के महान् अधिकारी विद्वान् एवं साधक थे। उनकी इस परम विद्या में अबाध गति थी। उनका "दीक्षा नाम श्री षोडशानन्दनाथ" था। उनके द्वारा संस्कृत में लिखे गये 'श्रीविद्या रत्नाकर' ग्रंथ को उपासकों में अत्यन्त लोक प्रियता मिली और वह शीघ्र ही समाप्त हो गया। उपासकों की बार-बार माँग से द्रवीभूत होकर महाराज श्री ने यह श्रीविद्या पर दूसरा ग्रन्थ संस्कृत में लिखकर आध्यात्मिक जगत् पर जो उपकार किया है उसके लिये समस्त श्रीविद्या उपासक उनके ऋणी रहेंगे। बारह प्रकरणों में समस्त पूजा का विधान का शास्त्र समस्त निरूपण किया गया है। परिशिष्ट में अनेक आवश्यक विषयों के निरूपण से उपासकों के लिये ग्रन्थ की उपयोगिता बढ़ गयी है।

इस पुस्तक में श्री क्रमोपासकों के लिये प्रातः काल से लेकर रात्रि पर्यन्त किये जाने वाले तथा अन्य अपेक्षित नैमित्तिक आदि जो कृत्य हो सकते हैं उन सबका संग्रह इस एक ही पुस्तक में उपासकों को मिल सकता है। सांगोपांग पूजा होम आदि का विधान तथा उपासकों के लिये जो भी आवश्यक है उस सबका श्री चरणों ने इस पुस्तक में बड़ा सुन्दर निरूपण किया है। जन्म-जन्मांतर के के पुण्यों के उदय होने पर ही सद्गुरु की प्राप्ति होती है और उनकी कृपा से ही शिष्य को सिद्धि लाभ होता है। वस्तुतः स्वामी जी महाराज श्रीविद्या के ऐसे ही महान् साधक थे जिन्होंने परम गोपनीय इस विद्या को भी लोक कल्याण की भावना से प्रभावित होकर प्रकाशित करने में संकोच नहीं किया। सभी श्रीविद्या उपासकों के लिये महाराज श्री का यह कृपा प्रसाद सेवनीय है।

### धर्मकृत्योपयोगि-तिथ्यादिनिर्णयः कुम्भपर्व-निर्णयश्च

—प्रकाशक सन्त शरण वेदान्ती दुर्गाकुण्ड, वाराणसी।

यह लघुकाय संस्कृत में लिखी हुयी पुस्तक इस दृष्टि से अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है कि धर्म कृत्यों के लिये उपयोगी तिथि आदि का निर्णय में सूर्य सिद्धान्त के गणित पर आधारित पंचांगों को मान्य माना जाये अथवा दृग्गणित पद्धति वाले पंचांगों को मान्य माना जाये—इस विवाद पर स्वामी जी के शास्त्र-सम्मत विचारों का इस पुस्तक में संकलन हुआ है। बड़े लम्बे समय से ऐसे विवादों को लेकर अधिकारी विद्वान्, आचार्य तथा महात्मा तत्तत् विषयों पर अपनी लेखनी चलाते रहे हैं। पूज्य स्वामी जी की यह पुस्तक भी उसी विचार विमर्श की परम्परा में आती है। समय-समय पर होने वाले कुम्भ महापर्व, अधिक और क्षय मास एवं अन्यान्य महत्वपूर्ण पर्वों के निर्णय के लिये शास्त्र समस्त विचार सामग्री इस पुस्तक में बड़े सुन्दर ढंग से प्रस्तुत की गई है। शंकराचार्यों, वैष्णवाचार्यों तथा अन्य धर्माचार्यों द्वारा प्रशंसित इस पुस्तक में अनेक शास्त्रीय समस्याओं का समाधान बड़े प्रभावी ढंग से किया गया है। पुस्तकों के अन्त में महाकुम्भ पर्व के निर्णय के सम्बन्ध में हिन्दी में किया हुआ विवेचन उन सभी के लिये उपयोगी है जो इन पर्वों के शास्त्रीय महत्त्व से परिचित हैं। कुल मिलाकर यह पुस्तक सभी धर्म विश्वासी लोगों के लिये संग्रहणीय है।

### क्या संभोग से समाधि ?

—प्रकाशक—सन्त शरण वेदान्ती दुर्गाकुण्ड वाराणसी, पृ० सं० १०५, मूल्य २.००

यह पुस्तक पूज्य धर्म सम्राट श्री स्वामी करपात्री महाराज के विचारों का संकलन है। प्रसिद्ध सनातन धर्मी मासिक पत्र 'कल्पाण' के सम्पादक श्री राधेश्याम खेमका जी ने महाराज श्री के विचारों को प्रस्तुत विषय पर संकलित कर जनता जनार्दन की बड़ी सेवा की है क्योंकि आज के युग में पत्र-पत्रिकाओं, सिनेमा और रजनीश जैसे विचारकों की कृपा से समाज में सेक्स का प्रभाव बढ़ता जा रहा है। आचार्य रजनीश द्वारा लिखित 'सम्भोग से समाधि की ओर' पुस्तक पढ़कर प्रत्येक को यह अनुभव होना स्वाभाविक है कि हमारे शास्त्रों, ऋषि-मुनियों तथा विचारकों ने सेक्स को या तो ठीक निरूपण नहीं किया जिसके फलस्वरूप समाज में अनेक बुराईयों का जन्म हुआ। कितना भयंकर विष वमन किया इस विचारक ने सेक्स को खुली छूट देने से समाज नष्ट भ्रष्ट ही होगा। भारतवर्ष की इस मान्यता को नकारने वाले रजनोश के विचारों का युक्ति-युक्त खंडन इस पुस्तक में हुआ है।

### रामायण महाभारत काल मीमांसा :

—प्रकाशक—सन्त शरण वेदान्ती धर्मसंघ प्रकाशन दुर्गाकुण्ड वाराणसी, पृ० सं० ५६, मूल्य १.२५

यह स्वल्प कलेवर पुस्तक परम पूज्य धर्म सम्राट श्री स्वामी करपात्री महाराज के उत्कृष्ट ऐतिहासिक ज्ञान का परिचय देती है। इस पुस्तक को लिखने का उनका एकमात्र यही उद्देश्य है कि

रामायण तथा महाभारत के रचनाकाल एवं ऐतिहासिकता के संबंध में जो अनेक प्रकार के मतमतान्तर आज के विचार जगत् में प्रचलित हैं उनकी पूर्ण मीमांसा करके युक्ति-युक्त आधार पर इन दोनों महान् ग्रन्थों की ऐतिहासिकता और रचनाकाल का ठीक-ठीक निरूपण किया जा सके । पुस्तक के प्रारंभ में ही महाभारत की ऐतिहासिकता और उसके एक लाख श्लोक होने के सम्बन्ध में भारतीय साहित्य में सैकड़ों प्रमाणों द्वारा यह सिद्ध किया गया है कि महाभारत एक ऐतिहासिक ग्रन्थ है । इसमें वर्णित युधिष्ठिर, अर्जुन, भीम आदि काल्पनिक न होकर ऐतिहासिक हैं । ये मन में उठने वाली दैवी-आसुरी प्रवृत्तियों के प्रतीकमात्र नहीं है । ऐसे ठोस एवं अकाट्य प्रमाणों का संग्रह इस पुस्तक में हुआ है जिन्हें पढ़कर फिर कभो इस प्रकार का भ्रम नहीं होता है ।

**चातुवर्ण्य-संस्कृति-विमर्श :**

(प्रथमो भागः)—प्रकाशक –गोवर्धन मठ, पुरी उड़ीसा पृ० सं० ३२४, मूल्य ६·००

वर्णाश्रम व्यवस्था हिन्दू धर्म की आत्मा है । इस पृथ्वी पर लोक कल्याणकारी अनेक व्यवस्थाएँ हैं किन्तु उनमें कोई ऐसी स्थायी व्यवस्था नहीं है जैसी वर्ण व्यवस्था है । समस्त वैदिक सिद्धान्तों का सार यही वर्णव्यवस्था है । लोक कल्याण के लिए परम पूज्य स्वामी श्री करपात्री जी महाराज ने समस्त वेदशास्त्रों का मंथन करके अमृतरूप इस ग्रंथ का संस्कृत में निर्माण किया । वस्तुतः इस युग में बढ़ते हुए धर्म विरोध का उन्मूलन करने के लिए यह विशाल ग्रन्थ लिखा गया है ।

यह ग्रन्थ दो भागों प्रकाशित हुआ है । प्रथम भाग में जन्म से वर्णवाद, वर्णद्वयवाद, एकवाद, आजोविकावर्णवाद, वर्णसंबंधी विचार और वेदाध्ययनाधिकार आदि के संबंध में विस्तार से विचार किया गया है । विश्वामित्र, वाल्मीकि, कक्षीवान्, सत्यकाम तथा ऐलूषक आदि के ब्राह्मणत्व सामयिक विषयों पर भी बड़े विस्तार के साथ युक्ति-युक्त विचार के साथ वर्णव्यवस्था सम्बन्धी बहुत सी शंकाओं का समाधान इस पुस्तक में किया गया है । स्वामी जी ने शास्त्रोय गुत्थियों को इस प्रकार से सुलझाया है कि पाठक को सहज ही शास्त्र का तात्पर्य अवधारित होने लगता है । पुस्तक की संस्कृत भी सरल सुबोध तथा समधुर होने से विषय को समझने में सहायक होती है ।

यहाँ दुःख के साथ लिखना पड़ रहा है कि अथक प्रयास करने पर भी इस महान् ग्रन्थ का हमें द्वितीय भाग प्राप्त नहीं हुआ है प्रथम भाग के सम्पादकीय में प्रकाशित विषय सूची को देखने मे पता चलता है कि वस्तुतः यह ग्रन्थ वर्ण व्यवस्था का विश्वकोश है । जातिभेद के संबंध में विदेशियों के विचार, जाति का परिष्कार, वेद का प्रामाण्य, गोत्र प्रवर-विमर्श और पुराण का प्रामाण्य आदि गम्भार विषयों का विवेचन द्वितीय भाग में हुआ है। इन सब विषयों को देखने पर यही कहना पड़ता है कि यह महान् ग्रन्थ वेदशास्त्र प्रतिपादित वर्णव्यवस्था के समर्थकों के लिये तो वरदान है ही किन्तु विरोधियों के लिये भी इस दृष्टि से उपयोगी है कि उन्हें अपने विचारों को ठीक प्रकार से

सरकार के सम्मुख अन्य सभी राजनैतिक दलों की दयनीय स्थिति होने से आज सच्चे मार्ग-दर्शन का संकट देश के सामने आ गया है। आज जनता की स्थिति अत्यन्त शोचनीय हो गयी है और उसका भविष्य अन्धकारमय होने से कल्याण का मार्ग प्रशस्त करने के लिए विचारशील लोगों के लिए यह जरूरी हो गया है कि वे सरकार की वर्तमान समाजवादी नीतियों पर गम्भीरपूर्वक विचार करें। इस लेख में सारी परिस्थितियों का पूज्य स्वामी जी ने बड़ा सामयिक एवं युक्तियुक्त विवेचन करके रामराज्य शासन प्रणाली द्वारा ही देश की वास्तविक प्रगति होने के सिद्धान्त का प्रतिपादन किया है। सभी विचारशील व्यक्तियों के लिये यह लेख वस्तुतः मननीय है।

## अहमर्थ और परमार्थसार

प्रकाशक ठा० राधामोहन सिंह स्वर्गाश्रम धाम, तिलकराम का [हाता]
पो० बड़का राजपुर, जि० आरा पृ० सं० २७०, मू० ६.००

परम पूज्य धर्मसम्राट् स्वामी करपात्री जी महाराज के अनमोल ग्रंथ 'मार्क्सवाद और रामराज्य' में चार्वाक मत प्रायः मार्क्स के नास्तिक दर्शन के खण्डन करने के लिये आत्मा के स्वरूप पर विचार किया गया है। वेद, पुराणेतिहास, तन्त्र, आगमादि का प्रामाण्य मानने वाले सभी आस्तिक कार्यकारण संघात से भिन्न आत्मा मानते हैं। अनेक सामान्य ज्ञानी तथा भगवद् भक्त आचार्यों ने ज्ञाता अहमर्थ को ही आत्मा माना है और इसी सिद्धान्त के अनुसार अगणित महापुरुष कल्याण के भागी हुये हैं किन्तु फिर भी कुछ लोगों ने उक्त पुस्तक में प्रतिपादित अहमर्थ के अनात्मत्व पर शंकायें उठायी हैं। इसी कारण आत्मस्वरूप पर पृथक् रूप से विचार करने के लिये इस ग्रन्थ का स्वामी जी ने प्रणयन कर धार्मिक जगत् का बड़ा उपकार किया है। इस ग्रन्थ में वेदान्त सम्बन्धी गूढ़ विषयों का इतनी सरल भाषा में और इतने सरल ढंग से प्रतिपादन किया गया है कि इसे पढ़कर हर व्यक्ति कल्याण मार्ग पर अग्रसर हो सकता है।

सम्पूर्ण पुस्तक दो खण्डों में लिखी गयी है। प्रथम खण्ड में वर्णित चौबीस विषयों में आत्मा के स्वरूप का विवेचन बड़े सुन्दर ढंग से हुआ है। उनमें संविद् या आत्मा, आत्मा का स्वप्रकाशत्व, अहमर्थ एवं आत्मा, अहमर्थनाश आत्म नाश नहीं, अहमर्थ एवं भूम विद्या, ज्ञान का स्वप्रकाशत्व तथा शुद्धात्म साक्षात्कार और भक्ति आदि विषयों के प्रतिपादन को पढ़ने से प्रत्येक को आत्मा के वास्तविक स्वरूप का बोध हो सकता है। वस्तुत आत्मा स्वप्रकाश, अखण्ड, नित्य, सर्वाधिष्ठान, सर्वव्यापक, सर्वद्वैतविवर्जित, सर्वश्रुति, स्मृति, पुराण, आगम प्रसिद्ध चैतन्य, वाणी, मन से अत्यन्त विदूर 'अहं' पद का लक्ष्य है। यह ग्रन्थ इन रत्नों का रत्नाकर है। इसके द्वारा परमार्थ तत्त्व का श्रवण, मनन और निदिध्यासन पथ प्रशस्त किया है। इसको अपनाकर मुमुक्षु साधक 'अहं' पद लक्ष्य तत्त्व को उपलब्ध कर कैवल्य पद में अवस्थित होकर कृतकृत्य हो सकता है।

पुस्तक के द्वितीय खण्ड में साक्षात् शेष भगवान् महर्षि पतञ्जलि के लोक प्रसिद्ध दार्शनिक ग्रन्थ 'परमार्थ सार' की शास्त्र सम्मत व्याख्या की गयी है। पचासी आर्या छन्दों में निबद्ध इस महान्

ग्रन्थ 'परमार्थ सार' की व्याख्या भौतिकता की ओर तेजी से अग्रसर होने वाले विश्व के तत्त्व-जिज्ञासुओं के लिए कल्याण पथ का मार्ग दर्शन करने वाली है। देश की सार्वभौम उन्नति केवल भौतिक विकास से नहीं हो सकती है, साथ साथ अध्यात्म की ओर भी लोगों की रुचि बढ़ायी जाये, तभी वास्तविक लोक कल्याण एवं मंगल हो सकता है। इसलिये महाराज श्री की यह अनुपम कृति सभी कल्याणकामियों के लिए संग्रहणीय है।

**वेदस्वरूप विमर्श**

प्रकाशिका—भक्ति-सुधा साहित्य परिषद् कलकत्ता। पृ० सं० ४४७, मू० ७·००

वेद समस्त जगत् का कारण है। वेद से ही स्थावर-जंगमात्मक विश्व का प्रादुर्भाव हुआ है। अतः तप के प्रभाव के बिना उस सर्वकारण वेद के वास्तविक स्वरूप का वर्णन करने में कोई भी समर्थ नहीं है। पुराण, इतिहास, दर्शन आदि उपांगों तथा शिक्षा आदि छः अंगों की सहायता से वेद के तात्पर्य को समन्वित करके आचार्य वेंकट माधव, सायण, उव्वट तथा महीधर आदि प्राचीन भाष्यकारों ने अपने भाष्य ग्रन्थों में बड़े समारोहपूर्वक प्रतिपादित किया है और सौ-सवा सौ वर्ष पहले इन्हीं भाष्यों के अनुसार लोग धर्म कार्यों में प्रवृत्त रहते थे किन्तु पाश्चात्यों का अन्धानुकरण करने वाले नास्तिक तथा अर्ध नास्तिक भारतीय विद्वानों ने वेदों के सम्बन्ध में ऐसे अनर्गल तथा शास्त्र विरुद्ध मतों का प्रवर्तन किया जिनसे आस्तिक जनता दिग्भ्रमित होकर किं कर्तव्यविमूढ बन गयी। स्वामी दयानन्द तथा उनके अनुयायी आर्यसमाजी विद्वानों के भाष्यग्रन्थों से धर्म के क्षेत्र में ऐसी अराजकता फैली कि आज हिन्दू धर्म का कोई ग्रन्थ, सिद्धान्त और मान्यता सर्वमान्य नहीं रह गये हैं। हिन्दू धर्म को इस दुरवस्था को देखकर परम पूज्य धर्मसम्राट् स्वामी श्री करपात्री जी महाराज ने इस ग्रन्थ का प्रणयन किया। संस्कृत में लिखे इस ग्रन्थ में स्थान स्थान पर दयानन्द तथा तदनुयायियों के भाष्यों की युक्तियुक्त समालोचना करके आचार्य सायण-महीधर आदि प्राचीन भाष्यकारों के भाष्यों की प्रामाणिकता का बड़े सुन्दर ढंग से प्रतिपादन किया है।

यह ग्रन्थ चार भागों में विभक्त है। प्रथम भाग में वेद के स्वरूप का शास्त्र सम्मत विवेचन हुआ है। द्वितीय भाग में उसके प्रामाण्य पर विचार करते हुये वेद को स्वतः प्रमाण सिद्ध किया गया है। वेद के लिये अन्य प्रमाण को आवश्यकता नहीं है। धर्म तथा ब्रह्म के विचार में उसके सर्वोच्च प्रामाण्य का विवेचन जिज्ञासुओं के लिये वरदान रूप है। तृतीय भाग में वेद को अनादि, अपौरुषेय तथा नित्य सिद्ध किया गया है। वस्तुतः वेद का निर्माण किसी भी काल में किसी भी व्यक्ति के द्वारा नहीं हुआ है। वह शाश्वत होने से ईश्वर की भी रचना नहीं है। ईश्वर केवल वैदिक सम्प्रदाय का प्रवर्तन करते हैं। चतुर्थ भाग में दयानन्द के इस मत का बड़ा युक्तियुक्त एवं शास्त्रसम्मत ढंग से खण्डन किया गया है कि ब्राह्मण भाग वेद नहीं है, केवल मंत्रभाग ही वेद है। समस्त प्राचीन आचार्यों, ग्रन्थों तथा सिद्धान्त को उद्धृत करते हुये पूज्य स्वामी जी ने इस पुस्तक में बड़े समारोह के साथ यह सिद्ध किया है कि ब्राह्मण भाग भी वेद है। मंत्र और ब्राह्मण इन दोनों की संज्ञा वेद है। वेद

के एक भाग को वेद मानना और दूसरे भाग को वेद न मानना वस्तुतः दुराग्रह का ही दुष्परिणाम है। इस प्रकार के अनेक शास्त्र सम्मत सिद्धान्तों का प्रतिपादन करने वाला यह ग्रन्थ उन सभी लोगों के लिये संग्रहणीय है जो वेद के वास्तविक स्वरूप तथा सिद्धान्तों को जानने के इच्छुक है। वेद के अनुसन्धानकर्त्ताओं के लिए तो यह ग्रन्थ एक प्रभावशाली मार्गदर्शक के रूप में सहायक सिद्ध हो सकता है। वस्तुतः वैदिक ज्ञान का एक ऐसा अनूठा ग्रन्थ है जिसका हिन्दी अनुवाद होने पर संस्कृत न जानने वालों को भी वेद का यथार्थ ज्ञान हो सकता है।

**भक्ति–रसार्णव :**

प्रकाशिका—भक्ति-सुधा-साहित्य परिषद्, १४५ काटन स्ट्रीट कलकत्ता पृ० सं० २४६, मूल्य ५.००

परम पूज्य धर्म सम्राट् स्वामी श्री करपात्री जी महाराज का यह संस्कृत का ग्रंथ भगवान् की निरतिशय भक्ति का रस-समुद्र है। इसमें भक्ति संबंधी सिद्धांतों का जितना शास्त्र सम्मत तथा युक्तियुक्त विवेचन हुआ है। उतना अन्य किसी ग्रन्थ में नहीं हुआ है। जीवन में भक्ति का अत्यन्त महत्त्व है। इसके बिना व्यक्ति का ज्ञान-कर्म सफल नहीं होता है। समस्त ग्रन्थ में ग्यारह प्रकरणों में भक्ति सिद्धांत का प्रतिपादन हुआ है। पहले प्रकरण में भजनीय तत्त्व के रूप में परब्रह्म परमात्मा का प्रतिपादन करके दूसरे प्रकरण में उसे शास्त्र द्वारा जानने योग्य बताया गया है। ब्रह्म तत्त्व के स्वरूप के संबंध में विभिन्न दार्शनिक मतों की मीमांसा करते हुए तीसरे प्रकरण में भगवान् श्रीकृष्ण की परम-ब्रह्मता को वैदिक प्रमाणों के आधार पर स्पष्ट किया गया है। चतुर्थ प्रकरण में ऋग्वेद के अपाला सूक्त के वास्तविक तात्पर्य और भगवान् श्रीकृष्ण की प्रधानता को विशेष रूप से स्पष्ट किया है।

पाँचवे प्रकरण में भगवान् कृष्ण और भगवती राधा की वेदशास्त्र प्रतिपाद्यता पर बड़े विस्तार से प्रकाश डाला है। इस विवेचन को पढ़ने से यह स्पष्ट हो जाता है कि भगवान् कृष्ण और राधा का वर्णन केवल पुराणों में ही नहीं हुआ है वरन् दोनों का इतिहास वेद सिद्ध होने से परम प्रमाण है। भगवान् विष्णु का महत्त्व बाद में हुआ पहले इन्द्र का ही महत्त्व था। इस मान्यता का खण्डन करते हुए छटे प्रकरण में महाराज श्री ने ऋग्वेद के वृषाकपिसूक्त की शास्त्र सम्मत व्याख्या करके भगवान् विष्णु की पूज्यता का अनादित्व बड़े सुन्दर ढंग से प्रतिपादित किया है। सातवें प्रकरण में ऋग्वेद के पुरुष सूक्त और देवी सूक्त के परम तात्पर्य को स्पष्ट किया गया है। इन दोनों सूक्तों के समस्त मंत्रों की व्याख्या करते हुए समस्त शास्त्रों का तात्पर्य परमानन्द रूप भगवती-अधिष्ठित परब्रह्म में बताकर सीता-राम तथा राधाकृष्ण की उपासना की सर्वश्रेष्ठता प्रतिपादित की गयी है।

आठवें प्रकरण में ग्रन्थ के सबसे अधिक महत्वपूर्ण विषय 'रस स्वरूप विमर्श तथा भक्तिरस का बड़े सुन्दर ढंग से प्रतिपादन हुआ है। इसमें काव्य शास्त्रों में प्रतिपादित रस सिद्धांत का सांगोपांग

विवेचन करते हुए भक्ति रस को दसवां रस सिद्ध किया है। इससे पूर्व भक्तिरस को स्वतन्त्र रस न मानकर शृंगार रस का भाव माना जाता था किन्तुआश्चर्य है अद्वैत वेदांत के आचार्य होते हुए पूज्य स्वामीजी ने भक्ति रस की दसवें रस के रूप में स्थापना करके साहित्यिक जगत् एवं भक्ति के क्षेत्र में नयी क्रांति का सूत्रपात किया। जो कार्य भक्ति के बड़े-बड़े आचार्यों ने नहीं किया उसे अद्वैत वेदांत के आचार्य द्वारा किया जाना सचमुच में बहुत बड़ा आश्चर्य है। इस महान्‌कार्य के लिए स्वामीजी भक्ति जगत् में सदा स्मरण किये जायेंगे। यही कारणहै उत्तर प्रदेश सरकार ने पांच हजार रुपये के पुरस्कार से इस महान् ग्रन्थ को पुरस्कृत किया।

नवें प्रकरण में भगवद्धाम के स्वरूप और उसकी प्राप्ति के संबंध में मीमांसा की गयी है। दसवें प्रकरण में निराकार ब्रह्म की शरणागति का प्रतिपादन हुआ है। अन्तिम ग्यारहवें प्रकरण में भक्ति को मुक्ति से सौगुना अधिक श्रेष्ठ सिद्ध किया गया है। वस्तुतः यह ग्रन्थ स्वामी जी की अमर कीर्ति का परिचायक है। केवल यही ग्रन्थ उन्हें युग-युगों तक अमर रखने के लिये पर्याप्त है। यदि इस ग्रन्थ-रत्न का अनुवाद प्रकाशित हो जाये तो इस ग्रन्थ के प्रचार-प्रसार से सामान्य व्यक्ति भी लाभान्वित हो सकते हैं। भक्त जनों का तो यह सर्वस्व ही है। जिज्ञासुओं तथा शोधकर्ताओं के लिए यह वरदान रूप होने से संग्रहणीय है।

### वेद प्रामाण्य मीमांसा :

प्रकाशक—धर्मसंघ शिक्षा मंडलम् दुर्गाकुण्ड, वाराणसी पृ० सं० ७८, मूल्य १.००

वेद के स्वरूप तथा प्रामाण्य का विवेचन करने वाला यह संस्कृत का लेख परम पूज्य स्वामी श्री करपात्री जी महाराज का परम वैदुष्य तथा शास्त्रीय ज्ञान के चरमोत्कर्ष को प्रकट करता है। वेद की अनादिता, अपौरुषेयता तथा नित्यता को भारतीय दर्शन में एक स्वर से स्वीकार किया गया है किन्तु नास्तिक, अर्ध नास्तिक, जैन, बौद्ध तथा आधुनिक पाश्चात्य एवं तदनुयायी आर्य-समाजी विचारकों ने अनेक प्रकार के कुतर्कों, शास्त्र विरूद्ध सिद्धांतों तथा अनर्गल युक्तियों द्वारा वेद के प्रामाण्य को सन्देहास्पद बनाकर आस्तिक जनता को भ्रमितकर दिया था। इसलिये वेंकटमाधव, सायण, महीधर तथा उव्वट आदि महान् भाष्यकारों के होते हुए भी वेद के संबंध में अनर्गल मतों का प्रचार दिन प्रतिदिन बढ़ता चला गया। वैदिक सिद्धांतों की इस दुरवस्था से उद्विग्न होकर पूज्य धर्म सम्राट् वेदोद्धारक के रूप में जनता के सम्मुख आए और उन्होंने अनेक वैदिक ग्रन्थों का प्रणयन किया। प्रस्तुत लेख उनके उसी महान् प्रयास का फल है। इस लेख में स्वामीजी ने वेदों के सनातन स्वरूप को स्पष्ट करते हुए प्राचीन तथा अर्वाचीन विरोधियों की सभी कुशंकाओं, आक्षेपों तथा आपत्तियों का इतने प्रभावशाली ढंग से समाधान किया है कि इसका आद्योपान्त पढ़ लेने पर वेद संबंधी समस्त सिद्धांत स्पष्ट हो जाते हैं और फिर मनुष्य किसी प्रकार जाल में नहीं फंसता है। इसका लेख का सभी

को तभी लाभ हो सकता है जब इसका हिन्दी अनुवाद प्रकाशित हो जाये। तत्त्व जिज्ञासुओं के लिये यह मननीय लेख शोधकर्ताओं का मार्गदर्शक होने से वैदिक ज्ञान का अपूर्व कोश है।

**रामराज्य :**

प्रकाशक – सनातन धर्म प्रकाशन, मेरठ पृष्ठ संख्या ४०, मूल्य ५० पैसा

रामराज्य भारतीय शासन पद्धति का वह आदर्श रूप है जिसका वेद, रामायण, महाभारत तथा पुराण आदि प्राचीन ग्रन्थों से लेकर आधुनिक साहित्य में बड़े आदर के साथ वर्णन हुआ है। राजनीतिक स्वतंत्रता के बाद भारत को आध्यात्मिक तथा सांस्कृतिक स्वतन्त्रता की परम आवश्यकता है किन्तु खेद है कि इस महान् आवश्यकता पर हमारे बहुत कम राष्ट्रीय नेताओं ने समुचित ध्यान दिया है। अतः देश का वास्तविक निर्माण एक दिवा स्वप्न बन कर रह गया है। वर्तमान युग में हजारों वर्षों पश्चात् परम पूज्य धर्म सम्राट् स्वामी श्री करपात्री जी महाराज ऐसे महान् राष्ट्रीय आचार्य हुए जिन्होंने देश की आध्यात्मिक उन्नति के लिए अथक उद्योग किए। उन्हीं महापुरुष की कृति 'रामराज्य' में समाज की आध्यात्मिक स्वतंत्रता और उन्नति की प्राप्ति के लिये जो चिंतन हुआ है उसकी सहायता से राष्ट्र का सर्वाङ्गीण विकास करने में हम समर्थहो सकते हैं। यह रामराज्य क्या है? पूर्णतम पुरुषोत्तम भगवान् श्रीराम के अभाव में रामराज्य के क्या अर्थ हैं? इस प्रश्न का उत्तर देते हुए पूज्य स्वामी जी ने हमारी उस प्राचीन शासन प्रणाली का प्रतिपादनकिया है, जिसे रामायण में 'रामराज्य' महाभारत में 'धर्मराज्य' और पुराणोंमें 'सुराज्य' के नाम से पुकारा गया है। धर्म नियंत्रित पक्षपात शून्य शासन ही हमारा आदर्श है। अपने देश में आज जितना भी भ्रष्टाचार, अत्याचार तथा दुराचार फैला है उसका एकमात्र कारण धर्म निरपेक्ष शासन है। राजनीति से धर्म का क्या संबंध है? राष्ट्रोन्नति में धर्म का क्या स्थान है? विश्व शांति धर्मराज्य से ही कैसे संभव हो सकती है? तथा हमारा शासन विधान कैसा होना चाहिये? इन्हीं सब प्रश्नों का उत्तर इस पुस्तक में दिया गया है। जो व्यक्ति धर्म को राजनीतिसे सर्वथा पृथक् रखनेमें ही देश का कल्याण समझते हैं उन्हें इस पुस्तक को अवश्य पढ़ना चाहिये। वस्तुतः सभी विचारशीलों के लिये यह संग्रहणीय है।

**वाजसनेयी माध्यन्दिनी शुक्ल यजुर्वेद संहिता भाष्य :**

प्रकाशक—श्री राधाकृष्ण धानुका प्रकाशन संस्थानम् वृन्दावनम्, पृष्ठ संख्या २६६, मूल्य ६५.००

विश्वविख्यात 'वेदार्थपारिजात' नामक भाष्य भूमिका के पश्चात् परम पूज्य धर्म सम्राट् स्वामी श्री करपात्री जी महाराज ने इस ग्रंथ का प्रणयन किया। इस ग्रंथ की चिरकाल से प्रतीक्षा थी। स्वामीजी से पूर्व आधुनिक युग में अनेक भाष्यकारों ने सनातन धर्मानुकूल भाष्यों की रचना तो की किन्तु स्वामी दयानन्द आदि शास्त्र विरूद्ध भाष्यकारों के अनंगल मतों तथा प्रकरण विरूद्ध व्याख्याओं का उन्होंने खंडन किया जिससे आर्यसमाजी भाष्यकारों की गत सौ वर्षों में बाढ़ सी आती चली

गयी और वेद पर एकाधिकार के मिथ्या अभिमान से ग्रस्त होकर वे वेद के नाम पर मनचाहा छापकर आस्तिक जनता को ठगते रहे। ऐसी स्थिति में चारों संहिताओं का सनातनी भाष्य दुर्लभ होने से आर्य समाजी भाष्य सनातन धर्म के लिए चुनौती बनते चले गये।

आजकल अधिकतर जनता वेदों के हिन्दी अनुवाद पढ़ना अधिक पसंद करती है। आचार्य स्कन्द स्वामी, वेंकट माधव, उव्वट, सायण तथा महीधर आदि प्राचीन वेद-भाष्यकारों ने ब्राह्मण ग्रन्थ, सूत्र ग्रन्थ तथा परम्परा आदि के आधार पर अत्यन्त श्रेष्ठ भाष्यों का निर्माण कर वेदों के वास्तविक अर्थों का विशद रूप में विवेचन किया है। इन आचार्यों केभाष्य केवल संस्कृत में लिखे होने से सामान्य जनता उनसे अपरिचित रही इसलिये लम्बे समय से ऐसे वेदभाष्यों की आवश्यकता थी जिनमें आर्य-समाजी तथा पाश्चात्य भाष्यकारों के शास्त्र विरोधी मतों का निराकरण करते हुए शास्त्र सम्मत सिद्धांतों का प्रतिपादन भी किया गया हो। तथा साथ में हिन्दी अनुवाद भी दिया गया हो। इस कार्य को पूरा किया धर्मसम्राट् के वेदभाष्य ने।

इस महान् ग्रन्थ में वाजसनेयी-माध्यन्दिनी शुक्ल यजुर्वेद के प्रथम अध्याय की प्रत्येक कंडिका की शास्त्र सम्मत ढंग से प्रकरणानुसार व्याख्या संस्कृत में की गयी है और साथ में उसका हिन्दी अनुवाद भी दिया गया है। मंत्रों के विनियोग तथा देवता के सम्बंध में किये गये विवेचन में अनेक शास्त्रीय सिद्धांतों पर भी प्रकाश डाला गया है। स्वामी दयानन्द के भाष्य को भी तुलना की दृष्टि से साथ-साथ दिया गया है और उसकी युक्तियुक्त मीमांसा करते हुए आचार्य उव्वट, सायण तथा महीधर आदि भाष्यकारों पर उनके द्वारा किये गये अनर्गल आक्षेपों का शास्त्र सम्मत ढंग से निराकरण किया गया है। साथ में आध्यात्मिक अर्थ भी दिये गये हैं। भाष्य का अवलोकन करते-करते पाठक अनुभव करने लगता है कि पाश्चात्य तथा तदनुयायी स्वामी दयानन्द आदि भारतीय भाष्यकारों ने वेदमंत्रों के साथ बलात्कार करके अर्थ का अनर्थ ही किया है। वेदमंत्रों के शब्दों तथा प्रकरणों को किस प्रकार से तोड़मरोड़ कर उनके मनमाने अर्थ किये गये हैं—यह सब कुछ इस ग्रन्थ में बड़ी सुन्दरता से प्रस्तुत किया गया है। अतः समस्त वैदिक विद्वानों तथा वेदों के यथार्थ सिद्धांतों के जिज्ञासुओं के लिये तो यह ग्रन्थ वरदान रूप है ही किन्तु भाष्यों के तुलनात्मक अध्ययन की दृष्टि से भी यह महान् ग्रन्थ सभी आस्तिक जनों तथा विचारकों के लिये संग्रहणीय है।

अब हम परम पूज्य धर्मसम्राट् स्वामी श्री करपात्री जी महाराज की उन पुस्तकों की चर्चा कर रहे हैं जो आज या तो अप्राप्य हैं, या जिनका प्रकाशन बन्द है किन्तु ये सभी पुस्तकें समय-समय पर प्रकाशित होती रही हैं और अनेक व्यक्तियों के पास आज भी इन पुस्तकों में से कई एक पुस्तकें अवश्य होंगी। बहुतेरा प्रयास करने पर भी इन पुस्तकों का पूरा विवरण न मिलने के कारण हम नीचे इन पुस्तकों का उल्लेखमात्र कर रहे हैं जिससे महाराज श्री के साहित्य से अवगत होने में पाठकों को सहायता मिल सके :—

## राहुल जी की भ्रान्ति

मू० १.५०

परम पूज्य धर्मसम्राट् स्वामी श्री करपात्री जी महाराज के अनमोल ग्रन्थ 'मार्क्सवाद और रामराज्य' के उत्तर में हिन्दी के प्रसिद्ध साहित्यिकार श्री राहुल सांकृत्यान ने जो पुस्तक लिखी थी उसके निराकरण में लिखी हुई स्वामी जी की यह पुस्तक आज से लगभग ३० वर्ष पूर्व परम पूज्य ब्रह्मलीन जगद्गुरु शंकराचार्य ज्योतिष्पीठाधीश्वर स्वामी श्री कृष्णबोधाश्रम जी महाराज ने मुझे पढ़ने को दी थी। समय बहुत अधिक होने से अधिक स्मरण तो नहीं हो पा रहा है किन्तु इतना अवश्य स्मरण आ रहा है कि श्री राहुल जी के प्रत्येक आक्षेप का युक्तियुक्त उत्तर इस पुस्तक में दिया गया है।

## जाति, राष्ट्र और संस्कृति

मू० १.५०

इस पुस्तक को भी बहुत पहले देखा था। इसमें जाति, राष्ट्र और संस्कृति की शास्त्र सम्मत परिभाषा तथा इस सम्बन्ध में युक्तियुक्त विवेचन प्रस्तुत किया गया है।

## राष्ट्रीय स्वयं सेवक संघ और हिन्दू धर्म

मू० ५.००

प्रस्तुत पुस्तक में देश के प्रसिद्ध हिन्दू संगठन राष्ट्रीय स्वयं सेवक संघ का हिन्दू धर्म के प्रति क्या दृष्टिकोण है? वह कहाँ तक शास्त्र सम्मत और कहाँ तक शास्त्र विरुद्ध है? इत्यादि की विवेचना स्वामी जी की लोह लेखनी से इस रूप में हुयी है कि पाठक को शीघ्र ही यथार्थ का पता लग जाता है।

## रामराज्य परिषद् और अन्य दल

हम सभी जानते हैं कि पूज्य स्वामी जी महाराज केवल उच्चकोटि के धर्माचार्य ही नहीं वरन् अपने युग के महान् राजनैतिक विचारक भी थे। वह धर्म सापेक्ष पक्षपात विहीन राज्य को धर्म निरपेक्ष राज्य के स्थान पर देश के लिये कल्याणकारी मानते थे। इसके लिये उन्होंने धर्म सापेक्ष राजनीति का प्रचार करने वाली रामराज्य परिषद् नाम की संस्था को स्थापित किया था। प्रस्तुत पुस्तक में उसी रामराज्य परिषद् के धर्म सापेक्ष सिद्धान्त की कांग्रेस, जनसंघ और कम्यूनिस्ट आदि अन्य राजनीतिक दलों के धर्म निरपेक्ष सिद्धान्त से तुलना करते हुये रामराज्य परिषद् के महत्त्व को स्वामी जी ने बड़े ओजस्वी शब्दों में प्रतिपादित किया है।

## ये राजनीतिक दल

मू० ०.५०

चुनाव के दिनों में ट्रेक्ट रूप में प्रकाशित यह पुस्तक तत्कालीन समस्त राजनीतिक दलों के सिद्धान्तों पर तुलनात्मक दृष्टि से पूज्य स्वामी जी द्वारा लिखी हुयी है। इसके पढ़ने से समस्त राजनीतिक दलों का वास्तविक चित्र पाठक के मस्तिष्क में बन जाता है।

**आधुनिक राजनीति और रामराज्य परिषद्** मू० ०·५०

आधुनिक धर्म निरपेक्ष राजनीति के कारण देश में फैले भ्रष्टाचार, अनाचार, अत्याचार का निवारण करते हुये रामराज्य परिषद् किस प्रकार धर्म सापेक्ष राजनीति द्वारा देश का कल्याण कर सकती है ? इत्यादि जन जिज्ञासाओं के उत्तर में लिखी हुयी यह पुस्तक चुनाव के समय ट्रैक्ट रूप में छपवाकर वितरित करायी गयी थी।

**राजनीति में भी ईमानदारी** मू० ०·३०

हमारे धर्म शास्त्रों के अनुसार राजनीति भी धर्म का अंग होने से नैतिक मूल्यों पर प्रतिष्ठित होकर ही जनकल्याण का साधन बन सकती है, अन्यथा धर्म विरुद्ध होने से नैतिकता एवं ईमानदारी की अवहेलना कर राजनीति आधुनिक युग की भाँति जनशोषण का हेतु बन जाती है। इन्हीं सब विचारों को पूज्य स्वामी जी ने इस पुस्तिका में बड़े सुन्दर ढंग से प्रतिपादित किया है।

**व्यक्तिगत या सामूहिक** मू० ५०

इस पुस्तिका में इस विवाद पर विचार किया गया है कि समाज के लिये व्यक्तिगत सम्पत्ति का होना हितकर है या सामूहिक सम्पत्ति का होना। युक्तियुक्त ढंग से विचार पूर्वक किये हुये विवेचन से अनेक भ्रान्तियों का निराकरण होता है।

**समन्वय साम्राज्य संरक्षण**

इस पुस्तक के सम्बन्ध में कुछ भी लिखना हमारे लिये सम्भव नहीं है क्योंकि इस पुस्तक का कभी हमें दर्शन नहीं हुआ। आज भी इसकी एक प्रति पूज्य स्वामी श्री अखंडानन्द जी महाराज के वृन्दावन स्थित पुस्तकालय में उपलब्ध है।

**रास और प्रयोजन**

पूज्य स्वामी जी की भगवान् श्री कृष्ण की रासलीला और उसके प्रयोजन पर लिखी हुयी पुस्तक भक्ति साहित्य की अमूल्य निधि है।

**महात्रिपुर सुन्दरी वरिवस्या**

माँ भगवती पराम्बा त्रिपुर सुन्दरी की साधना पर लिखा हुआ यह ग्रंथ भक्तजनों के लिये वरदान रूप है।

**गीता का हुकमनामा**

परम पूज्य धर्मसम्राट् के अनन्य सेवक तथा काशी के प्रसिद्ध विद्वान् पूज्य पं० मार्कण्डेय ब्रह्मचारी जी के अनुसार महाराज श्री ने गीता के सिद्धान्त को प्रतिपादित करने के लिये यह ग्रंथ लिखा था जो प्रकाशित तो हुआ किन्तु जनता में वितरित नहीं हो सका।

# साक्षात्-विश्वनाथ श्री स्वामी करपात्री जी महाराज

—गणेश शंकर शुक्ल मन्त्री, धर्मसंघ कानपुर।

महाराज श्री की सदैव कानपुर नगर पर महान् अनुकम्पा रही है। कानपुर के भक्तों को श्रीमुख से रास पंचाध्यायी श्रवण करने की चिर अभिलाषा थी जिसके लिये वे २०-पच्चीस वर्षों से सतत् प्रयत्नशील थे परन्तु संयोग न हो पाया। रामलीला कमेटी (परेड) कानपुर ने महाराज श्री का उक्त कार्यक्रम नवरात्र वर्ष १९८१ में सम्पन्न कराने की इच्छा व्यक्त की, परन्तु समिति महाराज श्री से समय लेने में सफल न हो सकी। पुनः शिवकुमार त्रिवेदी जी ने प्रयास किया परन्तु असफल रहे। मुझसे कहा तो मैंने स्वामी जी के तत्कालीन सचिव श्री आत्म चैतन्य ब्रह्मचारी से मिलकर उक्त निवेदन किया। उन्होंने बतलाया कि नवरात्र का कार्यक्रम तो हजारीबाग (बिहार) को दिया जा चुका है . परन्तु हमने करबद्ध होकर स्वयं महाराज श्री की सेवा में उपस्थित होकर पूजनोपरान्त विनती की तो महाराज ने भी उक्त बिहार कार्यक्रम की स्वीकृति की बात कही, परन्तु उन्हीं महापुरुष ने दयार्द्र होकर कहा 'अच्छा ब्रह्मचारी को बुलाओ'—हम बुला लाये तो महाराज ने ब्रह्मचारी जी से कहा कि 'देखो शुक्ल जी नवरात्र का समय मांगते हैं, हजारीबाग वालों को लिख दो कि उनके लिये फिर कभी आगे तिथियाँ निश्चित कर दी जायेगी—ब्रह्मचारी जी के द्वारा बिहार कार्यक्रम की पूरी तैय्यारियाँ हो जाने की बात कहने पर भी महाराज जी ने कहा कि उन्हें लिख दो कि 'फिर आगे जब भी वे चाहेंगे तब ही उन्हें कार्यक्रम के लिये समय दे दिया जायेगा इस बार नवरात्रि का कार्यक्रम तो कानपुर को ही दे दो।' हमारी मन-वाणी-शरीर सब कुछ गद्‌गद् था रोमांचित था महाराज की अनुकम्पा के कारण।

दिनांक ५ अप्रैल से १३ अप्रैल ८१ तक कानपुर (परेड) मैदान में कार्यक्रम रखा गया। महाराज के पूछने पर बताया गया कि नवरात्र में प्रवचन हेतु 'रासपचाध्यायी' विषय रखा गया है—तो धर्मसम्राट् बोले—अरे इतने में तो उसकी भूमिका भी नहीं हो सकेगी इसके लिये तो कम से कम २ मासका समय चाहिये। चलो ठीक है। फिर रास पंचाध्यायी पर महाराज के प्रवचन आरम्भ हुये। महाराज तो साक्षात् विश्वनाथ के अवतार थे। प्रथम अवतार आद्य श्री शंकराचार्य के रूप में हुआ था और पुनः अब स्वामी श्री करपात्री स्वरूप में अवतरित होकर पथ से विचलित सनातन धर्म को पुनः दिशा दी, मार्ग दर्शन किया। धर्म, वेद, भक्ति, ज्ञान, गौ, ब्राह्मण आदि के उद्धार एवं संरक्षण का भीष्म प्रयास किया। महाराज जी के उक्त अवसर के प्रवचन पुस्तकाकार में धर्मसंघ प्रकाशन मेरठ द्वारा 'पिबतं भागवतं रसमालयम्' के नाम से प्रकाशित भी हो चुके हैं। इसे भी हम अपने एवं कानपुर के सौभाग्य एवं दुर्भाग्य का संयोग ही समझते हैं कि कानपुर ही महाराज जी की प्रवचनमाला का सुमेरु बना। कारण यहीं दिनाक ९ अप्रैल ८१ को वे रोगाक्रान्त होकर काशी चले गये और फिर कभी भी कहीं भी उनकी वह अमृतवाणी सार्वजनिक प्रवचनों के रूप में भक्तों को सुनने को न मिल सकी—उक्त

चार प्रवचन ही स्वामी जी महाराज द्वारा काशी से बाहर सार्वजनिक रूप से किये गये अन्तिम प्रवचन थे जिन्हें पढ़कर भक्त भावुकों को आज भी भाव समाधि लग जाती है और उन अभिनव शंकर का वह भक्त रूप नेत्रों के समक्ष प्रगट हो जाता है। भगवान आशुतोष से प्रार्थना है कि वह हमें उन ब्रह्मलीन महाराज के द्वारा बताये गये शास्त्रीय सिद्धान्तों का जीवन भर परिपालन करने की शक्ति प्रदान करें।

उनके श्री चरणों में श्रद्धाञ्जलि समर्पित है। धर्म की जय हो। अधर्म का नाश हो। प्राणियों में सद्भावना हो। विश्व का कल्याण हो। हर-हर महादेव जयघोष महाराज श्री के द्वारा बताये गये विश्व कल्याणकारी मार्ग के संकल्प सूत्र हैं जो युगों युगों तक जनमानस को सर्वे भवन्तु सुखिनः की भावना से ओतप्रोत करते रहेंगे। ●●

## चिरस्मरणीय महात्मा

मैंने अपने सन्यासी जीवन में तथा ७० वर्ष की आयु में जो अनुभव किया है उसके आधार पर कह सकता हूँ कि इस कलिकाल में सनातन धर्म की रक्षा यदि किसी महापुरुष ने की है तो भारत हृदय सम्राट स्वामी करपात्री जी का नाम ही चिरस्मरणीय रहने योग्य है वह महात्मा मोक्षगामी थे किन्तु हिन्दू संस्कृति के उत्थान हेतु उन्होंने जेल यातनाएँ सहीं, कष्ट उठाये, भूख व नींद का भी परित्याग करके वह हिन्दू हितों की रक्षार्थ जीवन भर जुटे रहे। इस युग में दूसरा ऐसा महात्मा पैदा होना कठिन है— ब्रह्मरूप महाराज श्री के प्रति सच्चे मन से मेरी 'ओम हरि' रूपी वन्दना अर्पित है, स्वीकार हो।

—१०८ श्री स्वामी हरिहराश्रम जी महाराज

– श्री कृष्णबोध दण्डी आश्रम,

पुरानी गढ़ चुंगी, मेरठ।

# शुभ संकल्पों के धनी

—पं० कालीचरण पौराणिक, प्रधान अन्नक्षेत्र, श्री कृष्णबोध दण्डी-आश्रम,
शङ्कराचार्यपथ, मेरठ।

कहा गया है कि 'जिसका चित्त इस अपार चिदानन्द सिन्धु परब्रह्म में लीन हो गया उसका कुल पवित्र हो गया, उसकी माता कृतार्थ हो गयी और यह वसुन्धरा (धरती) उससे पुण्यवती हो गयी'—

**कुलं पवित्रं जननी कृतार्था वसुन्धरा पुण्यवती च तेन।**
**अपार संवित्सुखसागरेऽस्मिल्लीनं परे ब्रह्मणि यस्य चेतः॥**

गत शताब्दियों के इतिहास पर दृष्टि डालने पर भी स्वामीदण्डी करपात्री जी महाराज के समान बहुमुखी अलौकिक प्रतिभा सम्पन्न ब्रह्मनिष्ठ लोककल्याण निरत महापुरुष दृष्टिगत नहीं होता। जिनका क्षण क्षण वेद, धर्म, गौ एवं लोककल्याण में व्यतीत हुआ हो। जिनकी इस धरती पर उपस्थिति मात्र से राष्ट्र का मंगल होता था। जिनके पवित्र निर्मल निष्कलंक अन्तःकरण में सदा शुभ संकल्पों का उदय होता रहता था। भारतीय संस्कृति-सभ्यता एवं धर्म की मर्यादा युक्त मापदण्डों के संरक्षकों में निरत आज कोई विरले ही नजर आते हैं, क्योंकि सर्वोच्च सत्ता के पदों पर विराजमान लोगों से लेकर बहुजन समाज के व्यक्तियों तक सभी प्रायः पश्चिमी विचारधाराओं के पोषक ही दिखायी देते हैं। 'फूट डालो,—कुर्सी सम्भालो' के अंग्रेज प्रदत्त मन्त्र पर सभी जननायक मुग्ध हो गये हैं। इतिहास साक्षी है कि देश का विभाजन इसी का दुष्परिणाम है। सभी नेतृगण तो इस अभारतीय प्रवाह में बह गये। परन्तु इस बीसवीं शताब्दी में केवल एक ही ऐसी महान विभूति हो चुकी है, जिसने भारत को अखण्ड बनाये रखने पर बल दिया था। कारण यही प्रतीत होता है कि महत्वाकांक्षाओं के अधीन चिरकाल से संघर्षरत वृद्धनेतृगण शासन सत्ता सम्भालने के प्रलोभन में फंसते चले जा रहे थे। परन्तु ऐसे भीषण समय में भी एक निस्पृह, निर्लेप, दूरदर्शी, त्यागी, तपस्वी, मनस्वी, राष्ट्रभक्त महात्मा समझ चुका था कि नेतागण शासन को यथोचित ढंग से सम्भाल नहीं सकेंगे। खण्डित भारत की समस्याएँ कभी भी इस राष्ट्र को सुख चैन नसीब नहीं होने देंगी। इस वीतराग संन्यासी ने 'भारत अखण्ड रहे' की माँग करते हुये स्वतन्त्र भारत में भी प्रथम जेल यात्रा की। ······ नवस्वतन्त्रता प्राप्ति के तुरन्त बाद जब दुनिया भर के पाश्चात्य संविधानों का उच्छिष्ट सार संग्रह करके भारत का संविधान बनाया राष्ट्र नायकों ने तब तो इस भारतीय राजनीति शास्त्रों के प्रकाण्ड विद्वान् महान राजनीतिज्ञ महात्मा ने इसका कड़ा विरोध किया और माँग की कि भारतीय नीति-अर्थ शास्त्रों पर आधारित हो—परन्तु शासकों के कान पर जूं न रेंगी और फिर इस सन्त को राजनीति में भी उतरना पड़ा। परन्तु अब जो भी कुछ संघर्ष था, माँग थी वह अपनों से थी, उन भारतीय राष्ट्र नेताओं से थी जिन्हें पाल-पोसकर सत्ता के सर्वोच्च पद पर प्रतिष्ठित किया था, अतः नवस्वतन्त्र राष्ट्र

में आधुनिकवाद एवं पाश्चात्य संस्कृति सभ्यता की अपनों द्वारा ही लायी गयी उस तीव्र झंझावात में इस महात्मा की आवाज मद्धिम सी पड़ गयी। परन्तु इतने से ही स्वामी करपात्री जी महाराज द्वारा व्यक्त विचारों की सार्थकता कम नहीं आंकी जा सकती—अभी से परिणाम सामने आने लगे हैं।

स्वामी जी तो आध्यात्मिक जगत के प्रतिनिधि थे। युद्धोत्तर कालीन हिटलरी आतंक से जनता त्रस्त थी। स्वामी जी ने आध्यात्मिक धरातल पर महाशक्ति जगदम्बा माँ भगवती की आराधना हेतु दिल्ली, कानपुर, काशी, कलकत्ता, बम्बई, लखनऊ, उदयपुर, अमृतसर आदि अनेकों स्थानों पर विशाल वैदिक महायज्ञों के अनुष्ठान सम्पन्न कराये –परिणाम—भारत को स्वतन्त्रता मिली, हिटलर ने आत्महत्या कर ली। आध्यात्मवाद को लेकर स्वामी जी ने इस धर्मप्रधान देश में एक नवीन वैचारिक क्रान्ति का सूत्रपात किया। उन्होंने भोगवाद के स्थान पर त्याग तपस्या को अपनाने पर बल देकर समाज को नयी दिशा देने का भीष्म प्रयास किया। चिरप्रसुप्त भारतीय समाज में वैदिक पुरातन सनातन शाश्वत धर्म तत्त्वों के प्रति आस्था की पुनर्स्थापना करने के लिये अनेक ग्रंथ लिखे, पत्र-पत्रिकाओं का प्रकाशन किया, अभारतीय तत्त्वों को शास्त्रार्थ की चुनौतियाँ दी, सर्वसाधारण को राजनीति में भाग लेकर संघर्ष करने के लिये प्रेरित किया--तो इनके क्रिया कलापों का देश में बोल बाला होने लगा और भगवान आद्य शंकराचार्य की भाँति जन जन ने इन्हें 'धर्मसम्राट्' एवं 'अभिनव शंकर' कहकर समादृत किया – फल यह निकला कि भारतीय शासकों द्वारा हिन्दुओं पर थोपा जाने वाला अभारतीय 'हिन्दुकोड' पं० नेहरु के लाख प्रयास करने पर भी –यथावत् स्वीकृत न हो सका। इसके लिये स्वामी जी ने सिर हथेली पर रखकर सत्याग्रह किये, जेल यात्राएँ की, अनशन किये—परन्तु आधुनिक भोगवाद की प्रबल आँधी को अपनों द्वारा ही हवा देने के कारण अपेक्षित सफलता नहीं मिल सकी और उसके कुपरिणाम आज राष्ट्र को भुगतने पड़ रहे हैं। स्वामी जी ने अपनी दूरदर्शिता से कोड के कुपरिणामों का निरूपण 'हिन्दूकोड प्रमाण की कसौटी पर'—नामक ग्रंथ में बड़े मौलिक ढंग से किया है - निष्पक्ष विचारक अध्ययन कर अपना स्पष्ट मत राष्ट्र के समक्ष प्रस्तुत करें।

युगदृष्टा होने के कारण स्वामी जी ने स्पष्ट घोषणा की कि जब तक भारत भूमि पर गोमाता का रक्त गिरता रहेगा, अतिवृष्टि, युद्ध, अनावृष्टि, आपसी कलह, रक्त-पात आदि रोके नहीं जा सकेंगे। अतः सुख शान्ति की स्थापना हेतु स्वतन्त्र भारत में 'गो हत्या' का पातक बन्द होना चाहिये। इसके प्रश्न पर उन्होंने प्रबल आन्दोलन किये, यातनाएँ सहन की—परिणामतः राष्ट्र मन्दिर के अधिकांश प्रांगण में आज वैसी गो हत्या नहीं होती जैसी पारतन्त्र्य काल में होती थी—परन्तु देश का दुर्भाग्य है कि आज भारत की राष्ट्रीय सरकार चमड़ा, रक्त, हड्डी, माँस आदि के निर्यात द्वारा लाखों डालर विदेशी मुद्रा कमाने के लोभ में पड़कर नित्य प्रति बान्द्रा और टेगंरा जैसे अनेकों यन्त्रीकृत सरकारी बूचड़खानों में लाखों की हत्या करवाकर इस राष्ट्र के बच्चों के मुख से दुग्ध की धारा छीन रही है। स्वामी जी यावज्जीवन इसके लिये संघर्षशील रहे और अन्त में कह गये कि यह संघर्ष

(शेष पृष्ठ ६२४ पर)

# अभिनव शंकर

—हरिसिंह 'शादमां', व्यवस्थापक सरस्वती प्रेस, मेरठ–२

उस महान से महानतम महापुरुष रूप में अवतरित जगत कल्याण हेतु इस कार्यकाल में साक्षात धर्मावतार के रूप में धर्म को ज्योति पूरे देश में ही नहीं विश्व के कोने-कोने में प्रज्ज्वलित कर आस्तिक को ही नहीं नास्तिक तक को अवगत करा दिया कि धर्म क्या है ? अधर्म क्या है ? उसी शंकर स्वरूप कल्याणकारी आत्मा श्री स्वामी करपात्री जी को हम अपनी श्रद्धा के सुमन अर्पित कर अपने आप को धन्य मानते हैं वही अभिनव शंकर हैं।

**जिनहि कृपा कर देहु जनाई, जानहि तुमहि तुम्हीं हो जाई।**

वाली युक्ति को चरितार्थ कर वास्तव में विश्वनाथ भगवान शिव की अपार अनुकम्पा से श्री स्वामी करपात्री जी ने भगवान के इस विराट स्वरूप जगत को तत्वत: जान लिया था। जब श्री स्वामी करपात्री जी को विराट स्वरूप का साक्षात हो गया तो शेष रह ही क्या गया वह भी विराट स्वरूप में विलीन हो गये, समा गये ओर स्वयं भी विराट स्वरूप होकर अभिनव शंकर रूप में प्रगट होकर आशुतोष औढरदानी की लीला का अभिनय इस युक्तियुक्त ढंग से किया कि विश्व कृतार्थ हो गया। धन्य हैं हम ओर आप जिन्हें आज भी प्रातः स्मरणीय श्री चरणों का मानसिक तारतम्य जुड़ जाने पर आत्मा को अपूर्व शान्ति का सुख होता है और जीवन को सफल बनाने का सुफल मिल जाता है।

युग युगान्तर में ही मानव को ऐसा सुअवसर प्राप्त होता है कि जब करुणा वरुणालय भगवान धर्म रक्षार्थ किसी महापुरुष के रूप में अवतरित होकर ज्ञान, भक्ति, वैराग्य का प्रचार प्रसार कराकर जीव को मुक्ति का मार्ग प्रशस्त कराते हैं। इसी सन्दर्भ में आधुनिक युग का मानव अधर्म की भीषण अग्नि से तप्त पथ-भ्रष्ट हो गया है और भूल गया है कि इस मानुषतन का क्या प्रयोजन है ? तभी भगवान ने लोक कल्याणार्थ महापुरुषों के रूप में प्रगट होकर मानव मुक्ति के लिये अपना वचन चरितार्थ किया। हमें श्री स्वामी करपात्री जी और श्री स्वामी कृष्णबोध आश्रम जी के रूप में भगवान के दर्शन हुए। भ्रमवश कुछ लोग कहते हैं कि हम को आज तक भगवान के दर्शन नहीं हुए उनसे हमारा निवेदन है विश्वास और निष्ठा के साथ भक्ति भावना से साधु महात्माओं को अन्तर आत्मा में रमण करके देखें तो भगवान के दर्शनों का लाभ सुलभ हो जाता है। यह द्वय मूर्ति प्रतीत होते हुए भी वास्तव में एक ही थे राम और शिव की भाँति एक मर्यादा पुरूषोत्तम राम और एक भोले बाबा शिव। राम शंकरमय थे और शंकर राममय थे।

धर्म सम्राट् परम वीतराग यतिचक्र चूड़ामणि श्री स्वामी करपात्री जी महाराज ने वैसे तो हिमालय से लेकर कन्याकुमारी तक भ्रमण कर कठोरतम तप, व्रत का पालन करते हुए सन्यास धर्म निर्वाह करते हुए असंख्य गृहस्थियों को सन्मार्ग पर लगाकर उद्धार किया। उनकी महती कृपा

एक निर्धन ग्रामीण बालक से लेकर धनाढय वृद्ध तक पर सम थी, उनकी कृपा कटाक्ष से जहाँ धनाढय स्व० श्री राधाकृष्ण धानुका साधु वृत्ति से जीवन भर रह कर जीवन मुक्त हो गये वहाँ एक अकिञ्चन ब्राह्मण बालक संस्कृत का प्रकाण्ड पण्डित होकर सन्यास की दीक्षा लेकर वीतराग हो मुक्ति के शिखर पर पहुँच कर मुक्त हो गया।

वैसे तो श्री स्वामी करपात्री जी जीवन पर्यन्त जीव उपकार में तत्पर रहे। परन्तु अन्त में "वेदार्थ पारिजात" ग्रन्थ की रचना कर विश्व का जो उपकार किया वह चिरस्मरणीय रहेगा। इस ग्रन्थ के विषय में कुछ लिखना मेरे सामर्थ्य के बाहर की बात है लेकिन इस पाण्डित्य पूर्ण ग्रन्थ में क्षीर से नीर को पृथक कर यह सिद्ध कर दिया है कि हमारे पूर्वजों और समकालीन महात्माओं, विद्वानों, पण्डितों ने वेदों के अर्थ समझने परखने में कहाँ क्या जाने अनजाने भूल की है, यह उपकार की चिर-स्थायी धरोहर जन-जन के मानस को झकझोरती रहेगी, ऐसी आशा अवश्य करता हूँ। उन श्री चरणों में में मेरा साष्टांग नमन है।

●●

(पृष्ठ ६२२ का शेष)

उनके शिष्यों, प्रशिष्यों आदि द्वारा पीढ़ियों तक चलता ही रहना चाहिये जब तक सम्पूर्ण राष्ट्र में गोवध बन्द न हो जाये।

जब भी जहाँ भी हिन्दू हितों पर आघात हुआ स्वामी जी ने सबसे पहले वहाँ पहुँच कर कार्य किया—चाहे नोआखाली हो ? चाहे मामला पंजाब में हिन्दी रक्षा का हो। वेदों के ज्ञान को विचारकों के सम्मुख यथार्थ रूप से रखने हेतु वेद भाष्य लिखे, सर्व वैदिक शाखा सम्मेलनों का आयो-जन कराया। कहाँ तक गिनायें वर्तमान शताब्दी के महापुरुषों का जब भी कभी निष्पक्ष इतिहासकारों द्वारा मूल्यांकन किया जायेगा तब स्वामी श्री करपात्री जी मणिमाला के सुमेरु के रूप में गिने जायेंगे। उन्हीं की छत्रछाया में मेरे जैसे छोटे सिपाही को भी दल बदल की दुनिया से कोसों दूर रहकर सनातन धर्म की निस्वार्थ सेवा में निरत रहने का उन्होंने अवसर दिया—उन्हीं से प्रेरणा लेकर सब कुछ जन-हित में समर्पित करते हुये, एकान्त सेवन पूर्वक साधु सेवा में समय व्यतीत करते हुये उनके बताये मार्ग पर चलने का संकल्प है। उन ब्रह्मरूप महापुरुष से प्रार्थना है कि वे हमें सदा सन्मार्ग पर आरूढ़ रहने की शक्ति सामर्थ्य प्रदान करें—उन्होंने न जाने मेरे जैसे कितने लोगों की जीवन धारा को आध्यात्म पथ की ओर मोड़कर उसे धन्य बना दिया। उनके श्री चरणों में कोटि कोटि नमन ।

●●

# करपात्री जी की प्रेरणा से श्री विश्वनाथ शिवालय में रुद्राभिषेक

—जय प्रकाश गुप्ता एम० ए०, एल एल० बी०, साहित्य रत्न
मन्त्री श्री विश्वनाथ महादेव मन्दिर समिति छता अनन्त राम मेरठ शहर।

ब्रह्मलीन धर्म सम्राट्, श्रीमत्परमहंस परिव्राजकाचार्य, परम वीतराग, यतिचक्र चूड़ामणि, अनन्त श्री विभूषित, दण्डी सन्यासी, श्री हरिहरानन्द सरस्वती स्वामी करपात्री जी महाराज वर्तमान युग के महान सन्त, वेदादिशास्त्र प्रामाण्यनिष्ठ परम विद्वान एवं उच्चकोटि के विचारक थे। वे त्याग, तपस्या, आत्म बलिदान, सरलता एवं सौम्यता की साक्षात प्रतिमूर्ति थे। इसके साथ ही वे एक कर्मयोगी, निर्भीक सन्यासी तथा सनातन धर्म मर्यादाओं के संरक्षक व प्रमुख स्तम्भ थे। सनातन धर्म पर होने वाले प्रहारों का उन्होंने सदैव ही कड़ा प्रतिरोध किया।

महाराज श्री सनातन धर्म व संस्कृति के अनन्य उपासक तथा वेदादि शास्त्रों के मर्मज्ञ होने के कारण सनातन धर्म सिद्धान्तों के पथ-प्रदर्शक एवं शास्त्रीय अनुष्ठानों के प्रेरक भी थे। उनके द्वारा प्रेरित अनुष्ठान अत्यन्त प्रभावशाली होते थे। महाराज श्री के दर्शन करने तथा उनके द्वारा दिये गये धर्मोपदेश श्रवण करने का अनेक बार मुझे सौभाग्य मिला। फरवरी १९७७ में जब महाराज श्री मेरठ स्थित श्री कृष्णबोध दण्डी आश्रम में पधारे तब मैं उनके दर्शनार्थ वहाँ पर पहुँचा। महाराज श्री उस समय विश्राम कक्ष में लकड़ो की चौकी पर विराजमान थे।

चौकी के निकट ही बिछी हुई चटाई पर सर्व श्री पं० कालीचरण पौराणिक, रघुवीर नारायण मिश्र, मुरारी लाल शर्मा एवं श्याम सुन्दर वाजपेयी जी वैद्य आदि महानुभाव बैठे हुए थे। महाराज श्री के चरणों में दण्डवत प्रणाम करने के पश्चात मैं भी वहीं पर बैठ गया। महाराज श्री व उपस्थित महानुभावों के मध्य एक महत्वपूर्ण विषय पर वार्तालाप चल रहा था। वार्तालाप समाप्त होने पर महाराज श्री का ध्यान मेरी ओर आकर्षित हुआ। शीघ्र ही महाराज श्री व मेरे बीच वार्तालाप का विषय मेरठ नगर के मध्यवर्ती भाग गुजरी बाजार के निकट मौ० छता अनन्त राम में स्थित पुरातन व ऐतिहासिक शिवालय श्री विश्वनाथ महादेव मन्दिर बन गया।

वार्तालाप के बीच उक्त शिवालय के पुनरुत्थान कार्यों में आने वाली कठिनाइयों से महाराज श्री को जब मैंने अवगत कराया तो उन्होंने मुझसे प्रश्न किया—"क्या तुम इस शिवालय में रुद्राभिषेक भी कराते हो ?" मेरे द्वारा नकारात्मक उत्तर दिये जाने पर महाराज श्री बोले—"प्रत्येक महाशिव-रात्रि को इस शिवालय में रुद्राभिजेक कराया करो। इससे भगवान शिव प्रसन्न होंगे और वे अवश्य ही शिवालय के पुनरुत्थान कार्य में तुम्हारी मदद करेंगे।" इसके पश्चात महाराज श्री ने मुझे रुद्राभिषेक का महत्त्व बताया। उनके मतानुसार रुद्राभिषेक से मनोकामनाएँ पूर्ण होने के साथ-साथ सार्वजनिक कल्याण भी होता है तथा राष्ट्रीय एकता को बल मिलता है।

महाराज श्री से प्रेरणा मिलने के पश्चात आगामी महाशिवरात्रि के अवसर पर मैंने इस शिवालय में प्रथम बार रुद्राभिषेक कराया। तब से प्रत्येक महाशिवरात्रि को महाराज श्री के निर्देशा-

नुसार इस शिवालय में निरन्तर रुद्राभिषेक होता चला आ रहा है। रुद्राभिषेक कार्यक्रम में शिवभक्तों की भारी संख्या उपस्थित होती है। नगर के अनेक प्रतिष्ठित नागरिक एवं उच्चाधिकारी भी इस कार्यक्रम में सम्मिलित होते हैं। यह रुद्राभिषेक का ही चमत्कार है कि जिस शिवालय में भक्तगण भयवश प्रवेश करने में संकोच करते थे, वहाँ अनेक श्रद्धालु शिवभक्तों ने सपरिवार उपासना करने हेतु जाना प्रारम्भ कर दिया है।

मेरठ एक अत्यन्त प्राचीन वैदिक-पौराणिक जनस्थान रहा है। महर्षि विश्वामित्र, महर्षि जमदग्नि, भगवान परशुराम आदि महात्माओं के पावन आश्रम इसी क्षेत्र की शोभा बढ़ाते थे। गंगा यमुना के इस त्रैलोक्य पावन क्षेत्र को विदेशी आक्रान्ताओं ने खूब रौंदा है, विध्वंस किया है, निरन्तर हजार वर्षों तक यह पवित्र यज्ञभूमि, धर्मभूमि पददलित होती रही है जिसके परिणाम स्वरूप पुरातन आश्रम, मठ-मन्दिर आदि पुरातात्विक दृष्टि से महत्वपूर्ण स्थल अपने मूल रूप में इस क्षेत्र में अनुपलब्ध हैं। इतिहास की इसी कड़ी में मराठा राज्यकाल में, श्री विल्वेश्वर महादेव, औघड़नाथ महादेव, श्री विश्वनाथ महादेव, श्री चण्डी देवी, श्री मनसा देवी आदि के मन्दिर निर्मित हुए। सोलहवीं शताब्दी में स्वयंभू विश्वनाथ का मन्दिर भी इन्हीं सिद्ध स्थानों में से एक था। सन् १८५७ के के स्वाधीनता संग्राम की चिन्गारी इन्हीं केन्द्रों से प्रज्ज्वलित होकर सम्पूर्ण राष्ट्र में विकीर्ण हुयी है। स्वयं पेशवा नाना साहब धुन्धु पन्त आदि ने क्रान्ति का सूत्रपात किया था। इसी स्थान को अनेकों बार विधर्मियों ने नष्ट भ्रष्ट करना चाहा परन्तु धर्मप्राण इस राष्ट्र की आध्यात्मिक धरती से हर बार दूब के नाल के समान स्वतः यह स्थान विश्वनाथ-प्रस्फुटित होता रहा, अंकुरित होता रहा। और वर्तमान समय में श्री विश्वनाथ महादेव मन्दिर समिति, मेरठ नामक पंजीकृत सस्था इस ऐतिहासिक मन्दिर की प्रबन्ध व्यवस्था में निरत है। इस मन्दिर में समय-समय पर देश के बड़े-बड़े आचार्य, सन्त, महात्मा गण पधार चुके हैं। सन् १९७४ में ज्योतिष एवं द्वारका-शारदा पीठ के जगद्गुरु शंकराचार्य श्री स्वामी स्वरूपानंद सरस्वती जी महाराज इस पुरातन शिवालय में पधारकर आशीर्वाद प्रदान करचुके हैं।

शिवालय की प्रबन्ध-समिति शिवालय का पुनरुत्थान करके इसकी पुरातन गरिमा को पुनः स्थापित करने के लिये प्रयत्नशील है। समिति के निश्चयानुसार श्री करपात्री जी महाराज की प्रेरणा से प्रारम्भ किया गया रुद्राभिषेक कार्यक्रम इस शिवालय के प्रांगण में महाशिवरात्रि पर्व के अवसरों पर भविष्य में भी होता रहेगा। इस प्रकार श्री करपात्री जी महाराज इस शिवालय के प्रांगण में होने वाले रुद्राभिषेक के साथ सदैव अविस्मरणीय रहेंगे।